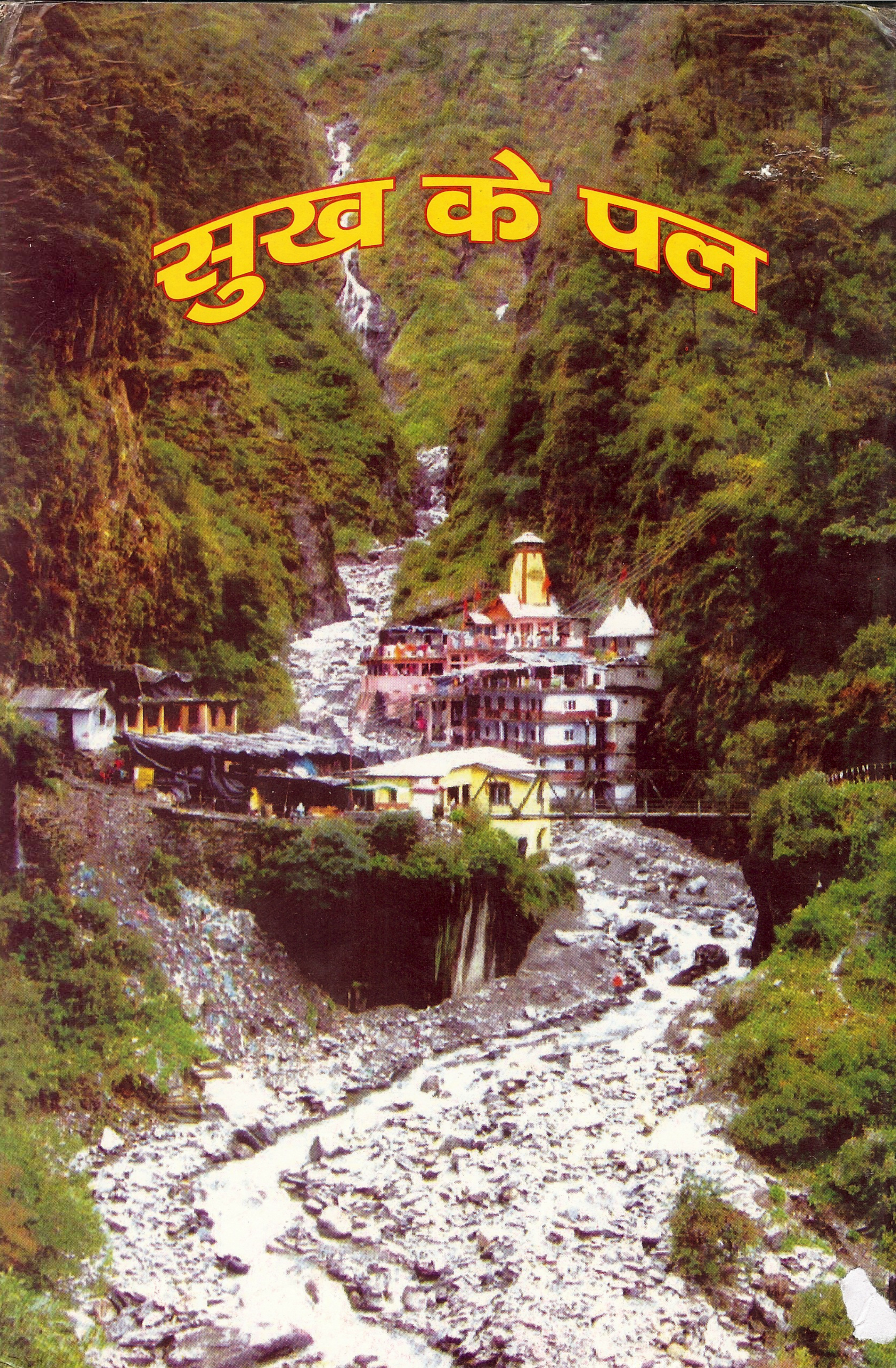
सुख के पल



सुख के पल

(संस्मरणात्मक उपन्यास)

लेखिका : तुलसी देवी तिवारी

श्री अक्षय पब्लिकेशन

बिलासपुर (छत्तीसगढ़) भारत

सुख के पल

(संस्मरणात्मक उपन्यास)

लेखिका : तुलसी देवी तिवारी

प्रकाशक

श्री अक्षय पब्लिकेशन

प्रधान कार्यालय : इलाहाबाद

शाखा कार्यालय : गोड़पारा, बिलासपुर छ.ग.

सम्पर्क सूत्र : 9907176361, 07752-420750

ISBN :

978 . 81 . 923627 . 1 . 7

प्रथम संस्करण – 2012

मूल्य – ₹ 200

आवरण :

मुद्रक :

अरविन्द प्रेस

आजाद नगर, साउथ मलाका, इलाहाबाद

मो. : 9839805097

सौजन्य :

भारतेन्दु साहित्य समिति

बिलासपुर, छत्तीसगढ़

अक्षर संयोजन

कमल राजपूत, मीरा कम्प्यूटर्स,

राजकिशोर नगर, बिलासपुर (छ.ग.) 9302418485

—: वितरक :—

ANUBHAV PRAKASHAN

Gaziyabad (U.P.) Mob. 09811279368

3. Vaibhav Prakashan, Amin Para Purani Basti

Raipur (C.G.) Mob. 9425358748

—: पुस्तक मिलने का स्थान :—

– देश के प्रमुख बुक डिपो

– श्री प्रकाशन, गाँधी चौक, बिलासपुर

– एलोरा बुक डिपो, पुराना हाईकोर्ट रोड, बिलासपुर

– माँ अम्बिका ज्वेलर्स, सराफा बाजार, गोंड़पारा, बिलासपुर छ.ग.
मो. 07752–420750

– बी/28, हरसिंगार, राजकिशोर, बिलासपुर छ.ग. मो. 9907176361

आत्म कथ्य

एक बार पुनः अपने सहृदय पाठकों के सामने अपनी संस्मरणात्मक कथा "सुख के पल" लेकर उपस्थित होते हुए मेरा हृदय आपकी सदाशयता के प्रति बेहद कृतज्ञ है क्योंकि, अब तक प्रकाशित सभी पुस्तकों (पिंजरा, सदर दरवाजा, ममता, कमला, परत–दर–परत, आखिर कब तक ?, वीर एकलव्य, राजलक्ष्मी एवं तपस्वी भरत) को जिस प्रकार आपका स्नेह मिला वह मेरे लिए प्रकाश दण्ड सिद्ध हुआ, जिसकी रोशनी में, मैं अपनी सृजन यात्रा सरलता पूर्वक करने में समर्थ हो सकी। उत्तराखण्ड के चारों धामों, यमुनोत्री, गंगोत्री, केदारनाथ, बद्रीनाथ की यात्रा का शुभ अवसर मुझे ईश्वर की कृपा से ही प्राप्त हुआ। जैसे मेरी यात्रा हुई उसे पढ़कर आप अवश्य समझ जायेंगे कि वास्तव में प्रभु जिसे बुलाते हैं वही पहुँच पाता है उन तक। आज तक मैंने परमपिता की शक्ति के बल पर उनकी सन्तानों के जीवन की कहानियाँ लिखीं। अब मैंने पहली कक्षा की बच्ची की भाँति सहमते–सहमते अपने पिता का नाम लिखने का प्रयास किया है। साथ ही जो व्यक्ति वहाँ तक नहीं पहुँच पाते, उन्हें अपनी लेखनी के विमान पर सवार कर इन श्रेष्ठ तीर्थों के दर्शन कराने का दुस्साहस भी किया है। अब तक मैंने जो लेखन किया, उससे ऊँचे स्तर की कृति समझती हूँ मैं 'सुख के पल' को, शेष निर्णय तो पाठकों के हाथ में है। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि इस पुस्तक को भी आप का वैसा ही स्नेह और आशीर्वाद मिलेगा, जैसा अन्य कृतियों को प्राप्त हुआ।

यात्रा का सुयोग बनाने के लिए मैं श्री ठाकुरराम पटेल की हृदय से आभारी हूँ। यात्रा रूपी नैया के खेवनहार

श्री आदित्य त्रिपाठी जी, देवकी दीदी, जवाहर रजक जी जिन्होंने ज्यादातर मेरा सामान उतारा चढ़ाया, दल के अन्य साथी, सबका उपकार है मुझ पर।

घर से अकेली जाने की आज्ञा देकर पति परमेश्वर ने मुझ पर जो विश्वास व्यक्त किया इस कारण उनके प्रति मेरा पूज्य भाव और बढ़ गया है। साहित्यकारों की कर्मभूमि बिलासपुर शहर के वासियों एवं साहित्यकार बन्धुओं, प्रातः स्मरणीय श्री रामनारायण शुक्ल जी अध्यक्ष भारतेन्दु साहित्य समिति, मार्गदर्शक श्री नंद किशोर तिवारी जी (संपादक लोकाक्षर ; छत्तीसगढ़ी की एकमात्र पत्रिका) सर्व शिक्षा अभियान सहायक जिला समन्वयक श्रीमती रीता चौकसे, संस्कृति विकास मंच, पाठक मंच, श्री कृष्णकुमार भट्‌ट, पथिक जी, राजेश मानस जी एवं जनाब अज़ीज रफीक जी बिलासा कला मंच, आदि साहित्यिक संस्थाओं पूज्य ध्वंशावशेष त्रिपाठी जी, श्री विनय कुमार पाठक जी, भाई बृजेश सिंह जी (वरिष्ठ गजलकार) की मैं कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने मेरा हर कदम पर उत्साहवर्धन किया। अपने पुत्रों, योगेश एवं विवेक को यात्रा में सहयोग हेतु आशीर्वाद देती हूँ।

मेरे नये प्रकाशन श्री अक्षय पब्लिकेशन की यह पहली पुस्तक है इसलिए भी इसका विशेष महत्व है। उम्मीद है भगवान् बद्रीश मेरी रचना का यह पुष्प स्वीकार कर मेरा मुँह माँगा वरदान प्रदान करेंगे।

आपकी स्नेहाकांक्षिणी
तुलसी तिवारी

-:: समर्पण ::-

श्री आन्जनेय



(1)

सुख के पल

अक्सर मैं सोचा करती थी कि भारत का मुकुट हिमालय कैसा होगा ? रवि की प्रथम रश्मियों से, हिमाच्छादित शिखर कैसे उद्भाषित होते होंगे ? मैंने चीड़ और देवदार वृक्षों के चित्र देखे थे। गंगा–जमुना के संगम पर अनेक बार स्नान किया था। मन में अभिलाषा थी माँ का उद्गम देखने की। किस पुण्य स्थान से निःसृत हुई, ये पवित्र रजतवर्णी विपुल जल राशि ? इनके तटों पर किस प्रकार के नगर–ग्राम बसे होंगे ? हमारे ही ग्राम सदृश्य या भिन्न तरीकों से। मेरा बचपन 10 वर्ष की उम्र तक उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के कोट नाम के ग्राम में व्यतीत हुआ था। गंगा जी का यह डेल्टा हजारों किलोमीटर क्षेत्र में, झाऊँ एवं मूँज के वनों से भरा, नील गायों के उछल–कूद से गूंजरित होता रहता। वे दिन तो नित्य गंगा जल का सेवन करते, उनके पाट पर से आती हवाओं से जीवनदान पाते, उनके तट पर उगे अन्न का आहार करते, बड़े–बड़े हिरमाने (कलिन्दर) खरबूजे और शकरकंद का भोग लगाते गुजर गये।

गंगा जी में आने वाली बाढ़ एवं कटाव के कारण गाँव छोड़कर तत्कालिन मध्य प्रदेश के बिलासपुर जिले के बाँकीमोंगरा नामक स्थान पर (अब कोरबा जिले में) नई खुली कोयले की खान में पिता जी को नौकरी करनी पड़ी। (एस.ई.सी.एल.) वहीं प्राथमिक शिक्षा पूर्ण हुई। पन्द्रह वर्ष की उम्र में ब्याह कर इलाहाबाद भेज दिया गया। पिता जी गंगा जी के परम् भक्त थे, कहा करते थे लड़कियाँ रहेंगी तो उनसे मिलने के बहाने गंगा जी का दर्शन परसन होता रहेगा। अच्छा घर वर देखकर मेरी दो छोटी बहनों की शाादी भी वहीं कर दी। पति सरकारी नौकरी में बिलासपुर शहर में थे, अतः जीवन का अधिकांश समय यहीं व्यतीत हो रहा है। मैं पहले एक गृहणी हूँ, पारिवारिक दायित्व, बहू, पत्नी, माता उसके बाद सास की चुनौती पूर्ण भूमिका में। मेरी यात्राएँ

बिलासपुर से इलाहाबाद और इलाहाबाद से बिलासपुर तक में सिमट कर रह गईं थीं। तकरीबन 30 वर्ष पूर्व परिवार के आर्थिक सहयोग की अभिलाषा से मैंने शासकीय स्कूल में शिक्षिका की नौकरी कर ली। इस समय पूर्व माध्यमिक शाला तोरवा में उच्चवर्ग शिक्षिका के पद पर पदस्थ हूँ। पड़ोस में रहने वाले श्री ठाकुरराम पटेल जी जो पूर्व माध्यमिक शाला दयालबन्द के प्रधान–पाठक व हमारे संकुल प्रभारी भी हैं, अपने शुभचिन्तकों में से हैं। उन्होंने अपने असामयिक कालकवलित पुत्र ओमनमोनारायण की पुण्यस्मृति में, स्ववित्त से हजारों, फलदार, छायादार एवं औषधीय वृक्ष लगाये हैं। उनका यत्नपूर्वक पोषण किया है। अपनी नजर में पड़ी छोटी से छोटी खाली जगह पर वे वृक्ष लगा देते हैं। एक हादसे में उनकी धर्मपत्नी वेदमति ने अपने दोनों हाथ गँवा दिये, ईश्वर के इस न्याय को हम आज तक नहीं समझ सके। गीता के अनवरत अध्येता, पटेल जी मेरी दृष्टि में एक कर्मयोगी मानव हैं। उन्होंने ही उत्तरांचल के चारों धाम की यात्रा का कार्यक्रम बनाया। सर्वप्रथम तो उन्होंने अपने कुछ आत्मीय जनों को तैयार किया। जिसमे उनकी बड़ी पुत्री के सास–ससुर श्री शत्रुघन पटेल, श्रीमती धनेश्वरी पटेल, संकुल के सेवानिवृत्त शिक्षक श्री आदित्य त्रिपाठी, उनकी धर्मपत्नी श्रीमती देवकी त्रिपाठी, दयालबन्द के वरिष्ठ शिक्षक पवार जी तथा भूतपूर्व समन्वयक श्री विपिन वर्मा जी एवं श्री ओमकार शर्मा (सेवानिवृत्त शिक्षक) सपत्नीक शामिल हुए। उन्होंने मुझे भी यात्रा पर चलने का आमंत्रण दिया। कई बार भरपूर तैयारी के बाद भी मेरी यात्राएँ निरस्त होती आईं थीं, और मैंने मान लिया था एक तरह से कि संभवतः मातृभूमि के अन्य सुरम्य क्षेत्रों को नजर भर देखे बिना ही इस संसार से विदा लेने वाली हूँ।

एक तो घर से साथ जाने लायक किसी की स्थिति नहीं थी। पति उम्रदराज़ हैं। बच्चे अपने–अपने घर परिवार, रोजगार, व्यापार में व्यस्त हैं। दूसरी अड़चन ये थी कि मुझे पेट्रोल की गन्ध से तीव्र

प्रतिक्रिया होती है। मोटर स्टेण्ड का ध्यान आते ही उबकाई आने लगती है। अब ट्रेन से तो सब जगह जाया नहीं जा सकता। "मैडम चलिए हम आपका ध्यान रखेंगे, सब कुछ अच्छा होगा"। पटेल जी ने मुझे उत्साहित किया।

"सर ! मैं तो बैठकर एक स्टेशन भी पार नहीं कर सकती। बस मुझे लगती है। मुझे ले जाकर आप अपनी यात्रा के आनन्द को भी खण्डित कर लेंगे। मैंने टूटे मन से उन्हें मनाकर दिया। परन्तु उन्होंने मेरी सारी शर्तें मानी, ट्रेन में सोने की जगह देंगे, साथ में रखेंगे, तबीयत खराब होने पर मदद करेंगे, उन्होंने ना कहने लायक कोई बहाना नहीं छोड़ा। फोन कर जब उन्होंने पूछा, "मैडम, टिकिट कटालें आपका" ? तब मैंने हिम्मत करके हाँ कह दिया। मेरी टिकिट बाद में कटाई गई थी, इसलिए मेरा आरक्षण नहीं हो सका। पटेल जी ने आश्वस्त किया "आप मेरी बर्थ पर सोये–सोये चलिएगा—। यात्रा प्रारम्भ करने के दो माह पूर्व से ही हम मन ही मन यात्रा की तैयारी में थे। इस बार मैंने यात्रा को किसी प्रकार के तनाव का रूप लेने नहीं दिया। न ही कोई खरीददारी की। जो है, जैसा है, उसी प्रकार जाने का निर्णय था मेरा। पूर्व में अमरनाथ यात्रा का असफल कार्यक्रम बनाया था। उस समय की अधिकांश वस्तुएँ थी मेरे पास। जैसे उम्दा सफारी बैग, गरम कपड़े, आलीशान जूते आदि। इन्हें ही इकट्ठा करके जाने वाली थी। अंतिम दिन के अंतिम घंटे तक मैं उस विघ्नबाधा की प्रतीक्षा रकती रही, जो मुझे यात्रा पर जाने से रोक देती।। यात्रा पर निकलने के एक दिन पहले मैंने अपने पुत्र विवेक उर्फ खजाना (प्रो. माँ अम्बिका ज्वेलर्स) से एक अच्छा सा डिजीटल कैमरा लाने को कहा। जिसे शाम को दुकान से आते वक्त वह लेता आया। यात्रा 1 अक्टूबर दिन शुक्रवार सन् 2011 को प्रारम्भ होने वाली थी। छुट्टी की कोई समस्या नहीं थी। क्योंकि सोमवार से दशहरा–दीपावली की छुट्टियाँ प्रारम्भ होने वाली थी। एक बाधा आ

ही गई, मेरे नवरात्रि व्रत का चौथा दिन था, पति महोदय कहने लगे, "नहीं जाओगी ! उपवास में यूँ ही तुम्हारी तबीयत खराब हो जाती है। कौन देखेगा ? क्या कोई डॉक्टर है तुम्हारे साथ" ये तो मुझे भी ध्यान नहीं आया था कि यात्रा के समय मेरा उपवास रहेगा। "मैं शक्ति की उपासना में हूँ कमजोर नहीं पड़ूँगी इस बार"। फिर उन्होने मना कर दिया तो समझो मैं यात्रा पर अवश्य जाऊँगी। मेरे जीवन में एक बहुत बड़ी विसंगति रही है, जिस कार्य को उन्होंने सहजता से अनुमति दे दी वह कभी, प्रारभ नहीं हुआ और जिसे मैंने जिद्द करके प्रारम्भ किया वह अवश्य पूर्ण होता रहा है। मैंने एक बैग एक अटैची, पानी का डिब्बा तथा भोजन, गिलास आदि का थैला तैयार किया। जिन्हें देखकर पति महोदय बड़े नाराज हुए "इतना सामान क्या करोगी ? जिसकी जरूरत हो वहीं खरीद लेना"। ढोयेगा कौन, उतारना–चढ़ाना कौन करेगा" ? उन्होंने स्वयं अटैची खाली कर दी। जो उन्हें समझ में आया उसे बैग में रख दिया। इसी समय यात्रा के संबंध में कुछ विचार विमर्श करने पटेल जी आ गये। उन्होंने कुछ कहना चाहा, इन्होंने उन्हें लगभग डाँट ही दिया। "पटेल जी ! जाने के बारे में आप अपने घर में बात किया करिये, यहाँ नहीं। वे बड़े सरल व्यक्ति हैं और इनके ऊपर से कठोर किन्तु अन्दर से कोमल स्वभाव से वाकिफ भी हैं। इसलिए अन्य बातें करके चले गये। भले ही आगे समय–समय पर उनके वाक्य दोहरा कर मेरा उपहास उड़ाते रहे।

1 अक्टूबर को संध्या साढ़े चार बजे गाड़ी छूटने वाली थी। सभी साथियों को रेलवे स्टेशन पर मिलना था। मुझे मेरे छोटे पुत्र खजाना ने स्टेशन पहुँचाया। पति महोदय अपनी बाइक से पोते इन्द्रजीत के साथ स्टेशन तक आये। चूँकि सीढ़ियाँ चढ़ना उनके लिए कठिन था, अतः एक नंबर प्लेटफार्म पर ही प्रणामकर के मैंने उनसे विदा ली। उनकी आँखों में चिन्ता की नमी मैंने अनुभव की। अच्छा लगा मुझे, जीवन साथी के हृदय में अपने लिए स्नेह का आभास

पाकर। हमने प्लेटफार्म नंबर 3 पर पहुँचकर गाड़ी की प्रतीक्षा प्रारम्भ की। वह लगभग एक घंटे लेट थी। तब तक मेरे मँझले पुत्र योगेश तिवारी भी पहुँच गये जो बिलासपुर हरिजन थाने में हेड कान्सटेबल हैं। संकुल समन्वयक जनाब़ अन्सारी जी, त्रिपाठी जी के पुत्र हमें छोड़ने आये थे। उत्कल एक्सप्रेस के स्टेशन पर आकर रुकने के बाद सबने मिल जुलकर सारा सामान चढ़ाया। स्टेशन पर एक अन्य सहयात्री से हमारा परिचय हुआ, नाटे कद गोरे रंग के रजक जी, साफ धुले कुर्ते पायजामें पर नेहरू कट जाकिट पहने हुए थे। वे भी हमारे संकुल की शाला कतियापारा के प्रधान पाठक हैं। तीन लोगों ने अंतिम समय में किन्हीं व्यक्तिगत कारणों से यात्रा पर जाने से इन्कार कर दिया। रजक जी अभी अभी दक्षिण भारत की यात्रा से आये थे, उन्हें लगभग जबरदस्ती पटेल जी ने अपने दल में शामिल कर लिया और वे संकोचवश हमारे साथ हो लिए। मेरे पुत्र योगेश ने परिश्रम करके मेरे लिए बर्थ आरक्षित करवाया। किन्तु वह बाकी लोगों से दस डिब्बे दूर था। पहले तो हम आठो व्यक्ति एक नम्बर डिब्बे में ही बैठे। जहाँ लगातार हमारे पाँच बर्थ थे, घर के लोग हमें बिदा करके चले गये, एक करूण भाव मन में छोड़कर। खासकर घर से निकलते समय मेरे चार वर्षीय पोते बिशु ने जैसी आँखों से मुझे देखा, उसे यादकर मेरा दिल रोना चाहता था – ''दादी मैं भी चलूँगा तुम्हारे साथ''। मैंने उसे अच्छे–अच्छे खिलौने लाने का प्रलोभन दिया, जिसे उसने अस्वीकार कर दिया। ''दादी मुझे अपने साथ हरिद्वार ले चलो, तुम्हें वहाँ पढ़ायेगा कौन'' ? वह शिक्षक बनकर रोज मुझे पढ़ाता है। हम स्कूल का खेल घर में खेलते हैं। मैंने गोद में उठाकर उसे प्यार किया था और उसकी आँसू भरी निगाहों की उपेक्षा करती बाइक पर बैठ गई थी। गाड़ी चलने के साथ अपना शहर बिलासपुर पीछे छूटने लगा। घर छोड़ने की पीड़ा पर हरिदर्शन की अभिलाषा ने मरहम लगाया।

आगे चाहे जितना सुख मिलने वाला हो अपनी कर्मभूमि से विदा होते समय मन एक कारूणिक खालीपन से दो चार होता ही है। बैठने में स्थानाभाव के कारण परेशानी हो रही थी। अतः पटेल जी और त्रिपाठी जी ने रजक जी को दस नम्बर डिब्बे की 20 नम्बर सीट पर बैठ जाने का अनुरोध किया, वह मेरी सीट थी, किन्तु वे मुझे अकेली नहीं बैठाना चाहते थे। रजक जी के साथ उनकी अटैची और बैग लेकर तीनों डिब्बे के अन्दर ही अन्दर दस नम्बर डिब्बे में गये, रजक जी को बैठाकर आश्वासन दे आये कि हम लोग आते जाते रहेंगे आपको अकेलापन महसूस नही होगा। रात के समय एक आदमी आकर अपनी एक और खाली पड़ी बर्थ पर सो जायेगा।

हम लोग मन हल्का करने के लिए कुछ कुछ विनोद पूर्ण बातें करने लगे। कुछ चुटकुले, स्मरणीय प्रसंग, कुछ प्रेरणा गीत आदि, पेण्ड्रारोड आने पर त्रिपाठी जी और पटेल जी, रजक जी को देखने गये, तो वहाँ का मंजर देखकर हक्के बक्के रह गये ''वे अपना सामान लेकर गाड़ी से उतरकर बिलासपुर वापस आने को तैयार थे।

''अकेले मुझे अच्छा नहीं लगता, बस अब आगे नहीं जाऊँगा'', वे रोआँसे हो रहे थे।

''अरे यार हेडमास्टर है या पहली क्लास का बच्चा, ट्रेन में अलग–अलग सीट मिल गई है, किसी को तो छोड़ना ही पड़ेगा। हमारे साथ पाँच महिलाएँ हैं उन्हें साथ रखना उचित है, उनकी देखभाल के लिए हम लोगों का रहना आवश्यक है'', त्रिपाठी जी ने समझाने की कोशिश की।

''सब कुछ ठीक है परन्तु अकेले मैं यहाँ नहीं बैठुँगा''। उन्होंने फैसला सुना दिया।

अच्छा चलो, वहीं सभी लोग वहीं बैठेंगे। रात में यहाँ आकर सो जायेंगे। अब आलतू–फालतू की बातें मत सोचो उन्होंने स्वयं रजक

जी की अटैची उठा लिया। बैग उठाये रजक जी हमारे पास आ गये। जगह तो थी नहीं ऊपर वाली बर्थ पर बैठे। अब वे प्रसन्न नजर आ रहे थे उन्होंने अपने बैग से रामनाम बैंक की कापी निकाल ली और लाल रंग की पेन से राम नाम लिखने लगे।

खिड़की के पास बैठी श्रीमती देवकी त्रिपाठी जो त्रिपाठी जी की धर्मपत्नी हैं जिन्हें अब से मैं दीदी ही लिखूँगी, धीरे–धीरे भजन गुनगुनाने लगी, मैं उनकी बगल में बैठी थी, सहज ढ़ंग से उनका साथ देने लगी। रात में दो लोग त्रिपाठी जी और शत्रुघन पटेल (ठाकुरराम पटेल के समधी) दस नंबर डिब्बे में जाकर सोयें। हम सभी आराम से सोते जागते, कटनी, बीना, झाँसी, ग्वालियर आगे निजामुद्दीन गाजियाबाद आदि बड़े शहर पार करते हुए 2–10–2011 दिन शनिवार की रात्रि ग्यारह बजे हरिद्वार पहुँचे। ''ये आगू–आगू झन भाग जा ना...ऽ'' ! देवकी भाभी ने ऊँचे स्वर में पटेल जी को मीठी डाँट लगाई। मैंने आश्चर्य से उधर देखा, ''कटनी में छूट गे रिहिनहें जो, एक पइसा धरे रिहिन न टिकिस, लेवा तो का करतिन'' ? मैंने प्रश्न के उत्तर में प्रश्न किया। ''हाँ गुरू जी छूटगे रहे ह'' ''हाँ जी पानी बर उतरे रहेंव, गाड़ी छुटके। संगे संग दउड़त रहेव, एक झन मनखे जंजीर खींच दिस। गाड़ी रूक गिस, आने डिब्बा म चढ़े रहेंव, दूसर स्टेशन म आयेहं फेर। तू तो घोड़ा बेंच के सुते रहे ह''। पटेल जी ने स्थान समय देखते हुए संक्षेप में सब कुछ बताया। सबने सामान उठाया, मेरा बैग बहुत भारी था, उसका वजन देखकर मेरे कनिष्ठ पुत्र विवेक ने बिलासपुर मे ही हँसते–हँसते कहा था ''माँ ! तकलीफ मत उठाना, यदि तुम्हें इस बैग को ढोना पड़े तो अनावश्यक वस्तुएँ फेक देना। उसे उतारना मेरे बस का नहीं था। रजक जी ने मेरा बैग उतारा। हम सभी लोग स्टेशन से बाहर आये। वातावरण खुशनुमा था, किन्तु डेढ़ दिन की यात्रा के दौरान स्नान–ध्यान एवं उचित विश्राम न मिल पाने के कारण महिलाएँ विशेष तौर पर स्लथ थीं, क्योंकि उन्हें इतनी लम्बी

यात्रा का पहला ही अनुभव था। ऑटो वालों ने स्टेशन पर ही घेर लिया। उन्हीं में किसी के साथ त्रिपाठी जी और रजवा (ये लोग सात सदस्य थे जिनमें तीन महिलाएँ और चार पुरूष थे। दस नम्बर डिब्बे में आते जाते मिल गये थे। बिलासपुर के ही है, त्रिपाठी जी के रिश्तेदार और स्नेही। वे पास--पास के गाँवों के निवासी हैं। अतः आगे की यात्रा उन्होंने साथ--साथ करने का फैसला किया) होटल देखने गये। ऑटो वाले स्टेशन के पास ही आस्था होटल में हमें ले गये। यहाँ पहुँचकर गंगा जी के पावन तट की प्राणदायक वायु के सेवन से सभी ने विश्राम का अनुभव किया। मेरा तो नवरात्रि का पाँचवा दिन था, अन्य लोगों ने आवश्यकता और रूचि के अनुसार भोजन आदि किया। रात्रि में ही कार्यक्रम बन गया कि प्रातः पाँच बजे गंगा जी की आरती का दर्शन करेंगे। सभी लोगों को उठाते नित्य क्रिया करते कराते हमें किंचित विलम्ब हो गया। हम लोग जब हर की पौड़ी पहुँचे तो आरती हो चुकी थी। विशाल जनसमूह का हिस्सा बनकर हम लोगों ने पहले गंगा सेवा समिति के निर्धारित स्थान पर अपने जूते चप्पल उतारे, तत्पश्चात् पूरे दृश्य पर एक विहंगम दृष्टि डालते, गंगा जी की तेजधार पर दृष्टि जमा दी। हमें समझ में नहीं आ रहा था कि इतनी प्रसन्नता किस क्रम से अपने मनो--मस्तिष्क में भर लें। तट पर बने प्राचीन अर्वाचीन मंदिरों में पूजा पाठ हो रहे थे, गंगा जी की मुख्य धारा के निकट ही पक्का तटबन्ध बाँधकर एक धारा निकाली गई है जिसे ब्रम्ह कुण्ड कहते हैं, इसमें अधिक बहाव नहीं है, ज्यादातर लोग इसी में स्नान करते हैं। मुख्य धारा के प्रचण्ड वेग एवं हिम तुल्य शीतलता के कारण उसमें स्नान मुश्किल है। किनारे--किनारे लोहे के मजबूत पाइप घेरकर सीढ़ियों पर स्नान के लिए सुरक्षित स्थान बनाया गया है पाइप से मोटी--मोटी लोहे की जंजीरें लटकती रहती हैं, जिन्हें पकड़कर स्नान करना संभव हो जाता है। हम पुल पार कर मुख्य धारा की ओर आये। फोटोग्राफर, फूल वाले, पोलिथिन वाले, आवाज

दे–देकर यात्रियों की सुविधा की आवश्यक सामग्री बेच रहे थे। "बाबू जी पाँच मिनट में रंगीन फोटो ! एक लाख का केमरा है" एक नौजवान हमारे साथ–साथ चलने लगा। पुल से उतर कर एक बार चहुँ ओर दृष्टि फिराई, गंगा जी की धारा के बीच जटा खोले भगवान भोले शंकर की अद्‌भुत मूर्ति देखकर अभिभूत हो गई। लगा जैसे मेरे समक्ष जगत पिता अपनी जटा से गंगा जी को मुक्त कर रहे हैं। यूँ तो अधिक ठण्ड नहीं थी, किन्तु गंगा जी की शीतल उज्ज्वल धारा के सानिध्य में वायु शीतल होना स्वाभाविक ही था। पक्का तट स्नानार्थियों के शरीर से निथरे जल से गीला हो रहा था। अतः वस्त्र आदि रखने के लिए हमने दस रूपये का एक पोलिथीन खरीद लिया। सबने अपने–अपने वस्त्र, थैले आदि उस पर रख दिये। सबसे पहले ओंकार प्रसाद शर्मा जी अपनी पत्नी के साथ स्नानकर सामान के पास आ गये। हम लोग सुविधानुसार नहाने लगे। मैं दीदी (देवकी त्रिपाठी) एवं भैया के साथ थी (त्रिपाठी जी) दीदी उम्रदराज महिला है, घुटनों में दर्द एवं बढ़े हुए वजन के कारण उन्हें सम्हालना आवश्यक था। उनको पकड़े मैं जल के समीप तक गई किन्तु मैया के वेग को देखकर मैंने त्रिपाठी जी से निवेदन किया कि भैया आप ही दीदी को सम्हालकर नहला दीजिए, उन्होंने ऐसा ही किया।

जंजीर पकड़कर मैंने स्नान किया, अहा ! ऐसा शीतल जल कि मिनट भर रह पाना मुश्किल, शुद्धतम् पिघले चाँदी सी जल धारा, हाँय...ऽ ऽ हाँय...ऽ ऽ ध्वनि से ऊपर से आता जल, लगा था मैया को बाहों में भर कर जगत् के सारे संताप शीतल कर लूँ। अजीब स्थिति थी हृदय की। सीढ़ी पर ही स्नान किया, जहाँ बैठने पर कमर तक पानी आ रहा था, कई लोग लेटकर अपना सिर गीला कर रहे थे। मैंने अंजुरी से जल लेकर अपना सिर गीला किया और तत्काल जल से ऊपर आ गई, हाथ में पुष्पांजलि, दीपक आदि लेकर हमने साथ लगे फोटोग्राफर से फोटो लेने को कहा, वह तो तत्पर ही था। हमने

मैया की श्रद्धा भक्तिपूर्वक पूजा की। सूखे वस्त्र बदले, गीले वस्त्र यूँ ही जरा खंगाल कर बैग में रखकर पुल से इस पार आये। इस बीच मैं अपने डिजीटल कैमरे में लुभावने दृश्यों को लगातर सुरक्षित करती जा रही थी। पुल के किनारे–किनारे बैठे दरिद्रनारायण को चिल्हर पैसों का दान कर, आशीष लेते हम हर की पौड़ी में, वहाँ आये जहाँ अनेक मंदिरों में भगवान् के अनेकानेक विग्रह सुशोभित हो रहे थे। गंगा, जमुना, दुर्गा माता आदि के मंदिर प्रातःकालीन साज–सज्जा से सुशोभित थे। पुजारियों ने थाल में नोट छितरा रखे थे, नये वस्त्रों के ढेर लगे थे, सभी जन श्रद्धापूर्वक दक्षिणा दे रहे थे। कुछ पण्डे अपने फ़न में इतने माहिर दिखे कि जहाँ कोई उनके सामने से गुजरा झट टीका लगा दिया, कुछ मंत्र पढ़ दिये और लंबा–चौड़ा संकल्प करा लिया। धर्मभीरू पुण्यार्जनाभिलाषी व्यक्ति रो के दे या हँस के देगा तो अवश्य। गंगा सेवा समिति वाले, गो सेवा समिति वाले, गरीबों के भोजन समिति वाले, गंगा आरती, भोग समिति वाले कार्यकर्ता हाथ मे रसीद लिए आप से, जहाँ–तहाँ दो चार हो जाते, मुझे इस प्रकार जबरदस्ती दान लेना अच्छा प्रतीत नहीं हुआ। फिर मैंने विचार किया कि इतनी बड़ी व्यवस्था दान के भरोसे ही तो चल रही है। हजारों लोग रोजगार प्राप्त किये हैं, यात्रियों के भरोसे ही तो ! फिर उनकी साधुता पर मुझे श्रद्धा हो गई।

(रंगीन चित्र 1– शंकर भगवान्)

(3)

हमारे दल के सदस्यों ने 3–10–2011 दिन सोमवार को सर्वप्रथम यमुनोत्री यात्रा पर जाने का निश्चय किया। दल का नेतृत्व कर रहे आदित्य त्रिपाठी जी, पटेल जी एवं नये शामिल हुए दल से रजवा, वाजपेयी जी आदि ने स्वल्पाहार आदि के पश्चात् ट्रेवलिंग एजेन्सी से सम्पर्क किया। आस्था होटल के करीब ही कई ट्रेवलिंग

एजेन्सियों के ऑफिस हैं। त्रिपाठी जी के पास गणेश ट्रेवलिंग एजेंन्सी का विजिटिंग कार्ड था। उन्हीं से सम्पर्क किया गया। दो गाड़ियाँ तय की गई, 407 टाटा, यह एक 10 सीटर मिनी बस थी और दूसरी छोटी और नई गाड़ी थी। उसमें नये दल के लोग 2 महिलाएँ दो नौजवान जो रजवा के पुत्र पुत्रियाँ थे बैठे। देवकी दीदी को चूँकि यात्रा में बेहद कष्ट होता था, इसीलिए उन्हें भी उसी गाड़ी में खिड़की के पास बैठाया गया। मिनीबस में पीछे की सीट पर वाजपेयी जी रजवा और उनकी बहन बैठे, बीच की सीट पर मैं और त्रिपाठी भैया उससे अगली सीट पर एक तरफ मिसेस शर्मा खिड़की की ओर, उसके बाद वेदमती पटेल, धनेश्वरी पटेल (पटेल जी की समधिन बैठे) उनके आगे वाली सीट पर ठाकुरराम पटेल, शत्रुहन पटेल एवं रजक जी बैठे। केबिन में ड्राइवर के साथ पहले ही ओंकार प्रसाद शर्मा विराजमान हो चुके थे। यात्रा के अन्त तक थोड़े बहुत परिवर्तन के साथ हमारी बैठक व्यवस्था ऐसी ही थी। हमारी गाड़ी का ड्राइवर एक मुस्लिम नौजवान था, उसका नाम अन्सारी था, वह गढ़वाली था। पहाड़ी रास्तो पर गाड़ी चलाने का उसका सात वर्षों का अनुभव था, वह हँसमुख किन्तु अपने मन की करने वाला आदमी था। आगे हमें जगह–जगह उसकी इच्छा के अनुसार यात्रा करनी पड़ी। **(रंगीन चित्र 2 यमुनोत्री धाम)**

हमारी यात्रा हरिद्वार से यमनोत्री के लिए मध्यान्ह 12 बजे प्रारम्भ हुई। हमारे आवश्यक सामान हमारे साथ थे बाकी बस की छत पर सुरक्षित बंधे थे। भगवान् का नाम लेकर हमने यात्रा प्रारंभ की। मैंने पहले भी जिक्र किया था कि बस के स्मरण मात्र से मुझे उल्टी आने लगती है। मैं बेहद चिन्तित थी, अपने स्वास्थ्य को लेकर। फिर लगता शायद तबियत खराब न हो, क्योंकि मेरा व्रत चल रहा था, सड़के भीड़ भरी थीं, वाहनों द्वारा छोड़े जाने वाले पेट्रोल डीजल के धुएँ एवं धूल से वातावरण बोझिल था, अन्सारी हमें देहरादून मसूरी होते हुए बरकोट ले जा रहा था। उसने टेप रिकार्डर पर एक कव्वाली चला

दिया था – "अलि मौला अलि मौला अलि हक" बार–बार ये ही पंक्तियाँ दोहराई जा रही थीं। कव्वाली वैसे भी ज़ोशोख़रोश के साथ गायी जाती है, घंटों इसी कव्वाली के साथ अन्सारी मगन होकर गाड़ी के स्टेयरिंग दायें–बायें घुमाता रहा, मसूरी में गाड़ी रोकी गई। कुछ लोगों को लघुशंका निवारण करना था, वहाँ एक विशाल शिवालय है, पीपल के सैकड़ो वर्ष पुराने वृक्ष के नीचे। तना बहुत मोटा है । उसे पक्के चबूतरे से घेरकर शिवलिंग स्थापित किया गया है। वहाँ, ताम्रपात्र एवं बाल्टी में दूध बेलपत्र इत्यादि रखा था यात्रियों की सुविधा के लिए। एक बात नई लगी यहाँ; जगह–जगह एक इबारत लिखी हुई थीं, मंदिर में रूपये–पैसे न चढ़ायें, उसी घेरे में मंदिर था अत्यंत भव्य, जहाँ शंकर भगवान् की मूर्ति के साथ माता पार्वती, गणेश जी, मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम, लक्ष्मण, सीता माता एवं रामभक्त हनुमान की मूर्तियाँ पुष्पाभरण से सुसज्जित विराज रहीं थीं। गेंदे के पुष्पों की भरमार थी। मंदिर में पोहे का भोग बँट रहा था, सब लोग पंक्विबद्ध होकर मंदिर की सीढ़ी पर बैठकर प्रसाद ग्रहण कर रहे थे। मुझे भी प्रसाद पाने की लालसा हुई, मैंने अपने व्रत की बात कहकर प्रसाद की याचना की। मुझे एक अमरूद प्राप्त हुआ। जिसे हथेलियों के बीच दबाकर तोड़ा मैंनें और बड़ी श्रद्धा और संतुष्टि से प्रसाद ग्रहण किया। पश्चात् देखा कि चाय भी बँट रही है, मन में आया कि थोड़ी पी लेनी चाहिए (3 वर्षों से मैंने चाय छोड़ रखी है) प्लास्टिक कप में चाय लेकर पिया। कुछ फोटो खींचे, मैंने अपने साथियों के साथ मंदिर में। पुस्तकों की दुकान ने आकर्षित किया, किन्तु भार बढ़ने की बात सोच कर मैंने पुस्तक क्रय करने का लोभ त्याग दिया। हमारी यात्रा पुनः प्रारम्भ हुई। हम यमुना नदी की धारा के विपरीत दिशा में लगातार चढ़ाई चढ़ते जा रहे थे, एक तरफ गहरी खाई एवं एक तरफ नगाधिराज की श्रृंखला। पहाड़ काट–काटकर मार्ग का निर्माण किया गया है, सड़कें प्रायः पक्की मिल रहीं थीं किन्तु दस फीट से अधिक चौड़ी नहीं, सामने से

आती गाड़ी को मार्ग देने के लिए गाड़ी धीमी कर पहाड़ से सटानी पड़ती। हम लगातार खिड़की से बाहर देखकर आश्चर्य करते रहे कि इतनी ऊँचाई पर इतनी व्यवस्था किस कदर हो पाती होगी। हमने विशाल यमुना जी का विशाल पुल पार किया। हमारा मन विज्ञान के चमत्कार के आगे नतमस्त होता रहा। अब धीरे-धीरे पटेल जी का चेहरा विवर्ण होने लगा और थोड़ी ही देर में उन्हें उल्टी शुरू हो गई। मैंने उधर से निगाहें घुमा ली। उनके समधी ने उन्हें सम्हाला। उनका मुँह खिड़की से बाहर किया। उसके बाद शत्रुहन पटेल, उनकी पत्नी धनेश्वरी, जवाहरलाल रजक आदि सभी को उल्टियाँ होने लगीं, कौन किसे सम्हाले, हमारे पास जो पानी था उसी से उनका मुँह धुलाया जाता रहा। मैं अन्दर ही अन्दर दुर्गा माँ की आभारी थी कि मेरी तबियत ठीक लग रही थी। किन्तु यह स्थिति अधिक देर न रही, पेट में जैसे आग का गोला घूम गया, सिर चकराया और मुझे भी उल्टी प्रारम्भ हो गई। खिड़की के बाहर सिर निकाली किन्तु तब तक कपड़े गीले हो चुके थे। फिर तो लगातर ओक् ओक् की आवाज के साथ जैसे मुँह से अतड़ियाँ बाहर आ जायेंगी, पेट में कुछ नही था, मंदिर में खाये प्रसाद के अलावा, वास्तव में जब से चाय पी थी तभी से मेरा जी मिचलाने लगा था। जल्दी ही मेरी हालत खराब होने लगी। मेरे मुँह से लगातार – हाय ! भइया, हाय भइया निकल रहा था। मेरी पुकार निश्चय की त्रिपाठी जी के लिए थी। मुझे लग रहा था कि अब मेरे प्राण नहीं बचेंगे। सहयात्री विवश थे। हमें 'बड़कोट' में रात्रि विश्राम करना था, किन्तु त्रिपाठी जी ने अन्सारी से कहकर डोमेल में ही बस रूकवा दिया। अन्सारी हमें एक साफ सुथरे होटल में ले गया। अन्य लोगों को मेरी सुध थी न मुझे किसी और की। हमारी छोटी गाड़ी भी वहाँ पहुँच कर रुकी, जिसमें से देवकी दीदी को उतार कर त्रिपाठी भइया ले आये। हम तीनों एक ही कमरे में रुके, डबल बेड पर मुझे सुलाया उन्होंने। दीदी मेरे साथ थीं। उनका व्यवहार ममत्वपूर्ण था।

त्रिपाठी जी ने मेडिकल स्टोर का पता लगाकर कुछ दवाईयाँ खरीदीं, नींबू के रस के साथ मुझे एक गिलास ग्लूकोज पीने को दिया। उन्हें चिन्तित देख मैंने कहा– "अब मेरी तबियत ठीक हो जायेगी, आप लोग चिन्ता न करे"। त्रिपाठी जी को गद्दा डालकर भूमिशयन करना पड़ा। रात में मेरी देखभाल उन्होंने आवश्यक समझी। दीदी ने हाथ पैर दबाने की बात कही मैंने उन्हें आभारपूर्वक मना कर दिया। उनका व्यवहार मुझे उनका चिरऋणी बना गया। **(रंगीन चित्र 3–बायें से श्री आदित्य त्रिपाठी जी, ओंकार शर्मा, श्रीमती शर्मा, वेदमती, धनेश्वरी एवं जवाहर रजक के साथ लेखिका)**

प्रातः पाँच बजे ही यात्रा प्रारम्भ करनी थी, कहा गया कि आवश्यक सामग्री ही हाथ के थैले में रखी जाय, बाकी बस के ऊपर बाँध दिया जायेगा, जिसे खोला नहीं जायेगा। यमनोत्री तक पहुँचने के लिए घोड़े की सवारी करनी पड़ेगी, जिसे साड़ी पहनकर करना मुश्किल है, अतः सलवार सूट ही साथ रखें, प्रातः तीन बजे आदत के अनुसार मेरी निद्रा भंग हुई। अभी सभी लोग सो रहे थे। मैंने अपना बड़ा बैग खोलकर आवश्यक कपड़े निकालना चाहा। देखती हूँ तो सलवार सूट है ही नहीं। बार–बार खंगालने पर भी न मिला। मुझे याद आया, चलते वक्त पंडित जी ने (पति महोदय) मेरा बैग हल्का करने के लिए कुछ उठा पटक की थी, उसी दरम्यान वह वहीं छूट गया। अब तो बड़ी असमंजस में पड़ी। कहूँ भी तो किससे ? यहाँ वैसी कोई दुकान भी नहीं थी, मैंने लक्स कोजी का अपर इनर रखा था, एक बड़ी सी शॉल थी उन्हें ही रख लिया। मुझे इन्हीं वस्त्रों से काम चलाना था। थी तो मुश्किल, लेकिन विवशता भी तो कोई चीज है । सबके उठने के पूर्व ही नित्यक्रिया से निवृत्त हो मैं प्रसन्न चित्त यात्रा हेतु तैयार थी। दीदी भैया भी उठे। सबने शीघ्रतापूर्वक यात्रा हेतु स्वयं को तैयार किया। एक गिलास ग्लूकोज नीबू का शर्बत लेकर मैंने त्रिपाठी जी से एवोमीन टेबलेट लेकर खा लिया। साथ ही बी. पी. की गोली भी लेली।

दीदी को भी जलपान कराकर आवश्यक दवाईयाँ दे दी गईं। हम निकलने वाले थे कि शर्मा जी आये। वे पूर्णतः तैयार थे "अब आपका स्वास्थ्य कैसा है ? मुझे आपकी बड़ी चिन्ता थी"। उन्होंने चिकित्सक की सी गंभीरता से पूछा।

"अब तो एकदम ठीक हूँ, शर्मा जी", मैंने कहा। बाकी लोग भी गाड़ी में यथास्थान बैठें। दीदी को छोटी गाड़ी में चढ़ाया गया। कल की स्थिति से सभी आशंकित थे किन्तु यमुना माता के उद्गम के दर्शन की अभिलाषा हमें उत्साह एवं शक्ति से सराबोर कर रही थी। प्रातःकालिन हवा में ठण्डक थी, हमने शाल स्वेटर पहन ओढ़कर अपने कान बाँध लिए थे। पटेल जी के गले में सलेटी रंग का मफलर बंधा था जो विशेष ध्यान देने लायक न था, किन्तु बाद में सभी के ध्यान का केन्द्र बन गया। त्रिपाठी जी अन्य यात्रियों के साथ होटल का हिसाब चुका रहे थे, मैंने चॉकलेट लेने के बहाने काउन्टर पर बैठे व्यक्ति से पूछा "भैया मुझे उल्टी बहुत आती है। आपको कुछ पता है इसका इलाज" ? "आप अपने बैठने की जगह पर अखबार बिछाकर बैठिये, मैडम उल्टी नहीं आयेगी" मैंने वही किया।

(रंगीन चित्र 4– श्री आदित्य त्रिपाठी जी एवं देवकी त्रिपाठी)

(4)

4.10.2011, दिन मंगलवार

यात्रा समय से किंचित विलंब से प्रारंभ हुई। अन्सारी हम पर बिगड़ रहा था। चलो करो देर मुझे क्या ? पड़े रहना रात भर यमनोत्री में, कुछ मिलेगा नहीं वापस आने को। मैंने मुस्करा कर अन्सारी से बातें की "अन्सारी बेटा ! नाराज क्यों होते हो, आ गये न हम लोग" ?

आज हमने उसके अलिमौला चलाने से पूर्व ही यमुना मइया की जय का नारा बुलन्द किया। संकट मोचन का स्मरण आते ही हमने बजरंगबली की जय का समवेत स्वर में घोष किया और मैंने पूछा किसे हनुमान् चालीसा पूर्णरूपेण कंठस्थ है? त्रिपाठी जी को याद था।

(मैं बीच–बीच में भूल जाती हूँ) मेरे आग्रह पर हनुमान्–चालीसा का उच्च स्वर में पाठ प्रारंभ हुआ, सभी ने साथ दिया। इसके बाद रजक सर ने संकट मोचन का पाठ प्रारंभ किया। अन्सारी ने खुशबूदार अगरबत्तियों से बस के वातावरण को पूजामय बना दिया था। धो–धाकर बस साफकर चुका था वह। जैसे ही हमारा पाठ समाप्त हुआ। अन्सारी ने अलिमौला लगा दिया उच्च स्वर में। सुनते सुनते दिमाग भन्ना गया। पीछे बैठे वाजपेयी जी ने शब्द जोड़े 'हरि बोल हरि हरि हर'' हम लोग गाने लगे। सूर्योदय हो रहा था, पहाड़ के पीछे से भुवन भास्कर का स्वर्णिम वृत्त प्रकट हुआ और घाटी में सोना बिखर गया। सीढ़ीदार खेतों में धान की फसल खड़ी थी पककर। कटने का इंतजार कर रही थीं। कहीं कटकर खेतों में पसरी थी। जगह–जगह मोटी धार वाले स्वच्छतम् जल वाले झरने पहाड़ों से गिरकर यमुना में मिल रहे थे। जिन्हें पाइप के द्वारा घाटी से जोड़ दिया गया था, कहीं–कहीं। ताकि मार्ग निरापद रहे। संकरी सड़क हर कुछ मीटर पर गोलाई में घूमकर ऊँचे चढ़ती जा रही थी। चीड़ के वृक्ष मिलने प्रारंभ हो गये थे। मौसम अनुकूल था, न अधिक ठण्डक न गर्मी। हमने जहाँ तक हो सका प्रकृति की मनोहारी छवि के साथ गलबहियाँ डालें अपने छायाचित्र अपने अपने कैमरे में सुरक्षित किये। देखने से मन भरता नहीं था। मुझे लगता था यदि खाने की वस्तु होती यह सब कुछ, तो खाकर तृप्त हो जाती। कहीं मार्ग खराब था, कच्चा और टूटा फूटा, झरने के बहाव के कारण, अथवा भू–स्खलन के कारण। कहीं तो बस का चक्का कुछ इंच मार्ग के बाहर तक चला जाता, जिस ओर हजारों फुट गहरी खाई थी। एक तरफ पहाड़ था, अन्सारी बड़ा कुशल बस चालक था, कहीं भी उससे चूक नहीं हुई। भले ही हमारे दिल की धड़कने घटती बढ़तीं रहीं। स्थान–स्थान पर आवश्यकतानुसार लोग बस रूकवाकर अपनी शंका का समाधान करते, आज रजक जी को दस्त लगने लगे थे, वे जब तब व्याकुल से चिल्ला पड़ते ''रोको, रोको मुझे

दो नम्बर जाना है'' अन्सारी अनसुना कर देता, त्रिपाठी जी, शर्मा जी से कहते – अन्सारी से कहो पानी देखकर बस रोक दे।

(रंगीन चित्र 5– गंगोत्री, शंकर जी ने अपनी जटा में गंगा जी को सम्भाला)

''वह भुनभुनाता हुआ बस किनारे कर रोकता, रजक जी ओट के लिए पहाड़ पर चढ़ते और अपनी शंका निवारण कर झरने के जल से अंग प्रच्छालन कर शांतिपूर्वक वापस आते। ऐसा कई बार हुआ। पीछे बैठे साथी रजक जी का मजाक बनाने लगे – ऊँची चोटी पर चढ़ चढ़कर......... ऊँची चोटी पर चढ़ चढ़कर ....'' रजक जी निगाहें झुकाये शर्माते रहे। हम लोग दूसरी ओर मुँह घुमाकर होठों पर आई मुस्कान छिपाते रहे, जैसे ही अन्सारी का टेप बन्द होता हम लोग भजन गाने लगते। इस बीच साथ रखे सूखे मेवों को गाय के घी में भून पीसकर बनाये फलाहारी लड्डू, सेव, केले, मूंग फल्लियाँ आदि बांट बांटकर खाते रहे। पानी के डिब्बे में पानी था ही, जहाँ भी बस रूकवाई जाती, पहाड़ के बिल्कुल नीचे से ऊपर तक का दृश्यावलोकन अद्भुत अनुभूति से आह्लादित कर देता। दिल मचल उठता, उस हरितिमा को आँखों में बसा लेने को, हाँय ऐं .... हाँय ऐं .... का अविरल नाद करते झरनों के रजतवर्णी नीर से अपना तन मन पवित्र कर लेने को। अपनी पहचान वाली जगहों पर अन्सारी बस रोकता, जहाँ हमें विवश होकर आवश्यक खरीददारी करनी पड़ती। चाय नाश्ता ठीक न मिलने पर कुछ लोगों ने उसके ऊपर कमीशन खोरी का आरोप भी लगाया, जिसे उसने मुस्कराकर अनसुना कर दिया।

बरकोट से स्यान चट्टी, हनुमान चट्टी, फूल चट्टी पार करते हुए हम लोगों की बस दिन के ग्यारह बजे जानकी चट्टी पहुँचकर बन्दर पूँछ (हिमालय की वह चोटी जहाँ से यमुना जी का उद्गम सामान्य जन को दृष्टिगत होता है) के चरणों में रूके । पहाड़ी इलाकों में कुछ फीट समतल जमीन का भी बेहद महत्व होता है –

पहाड़ की जड़ मे एक घाटीनुमा स्थान पर थोड़ा सा समतल था, बहुत सारी गाड़ियाँ वहाँ पहले से रूकीं थीं। अब यहाँ से पैदल अथवा घोड़े की सवारी थी। ऊपर लगभग 7 किलोमीटर की खड़ी चढ़ाई थी। जैसे ही हमारी बस रुकी घोड़े (खच्चर) वालों, पालकी वालों, पिट्टू वालों ने हमें घेर लिया, ''आओ माई, आराम से चलेंगे''। ''आओ बाबू जी ! घोड़े पर बैठो, आओ दीदी पालकी, माता जी को पिट्ठू पर ले चलेंगे। उनके कांव–कीच में हमारा स्वर दबा जा रहा था। उनके साथ उनके हृष्ट–पुष्ट जवान खच्चर, खच्चरियाँ, पालकी, पिट्ठू आदि थे। उनके चेहरे पर काम पाने की विकलता स्पष्ट नजर आ रही थी।

''अरे भाई ; हमें सलाह मशविरा करने दो'' मैंने नक्कार खाने में तूती की भाँति उनसे विनयपूर्वक कहा।

''माई मै ले चलूँगा, ''माई मैं ले चलूँगा''। ''माई पालकी में चलो''। मुझे बात करते देख सबने घेर लिया। हमारी छोटी गाड़ी आकर खड़ी थी। त्रिपाठी जी दोनों हाथों से भीड़ हटाते वहाँ तक गये और दीदी को सहारा देकर उतारा। हम दोनों बहने एक ऊँची जगह पर बैठ गईं। एक दूसरे का हालचाल पूछा। उन्होंने बताया,मुझे उन लोगों के बीच ठीक नहीं लग रहा है। मैंने समझाया, वहाँ आपको आराम है इसीलिए बैठाये हैं।

त्रिपाठी जी सबके साथ विचार विमर्श कर रहे थे कि कैसे आगे की यात्रा पूरी की जाय। पालकी वाले चार हजार माँग रहे थे, घोड़े वाले भी हजार भर की बात कर रहे थे। ऐसे ही पिट्ठू वाले भी।

वाजपेयी जी, रजवा एवं उनके दोनें लड़के, जो छोटी गाड़ी में चल रहे थे। पैदल जाने को तैयार थे। उन्होंने नुकीली पतली छड़ी खरीदी और निकल पड़े। त्रिपाठी जी मेरे लिए और दीदी के लिए पालकी लेना चाहते थे। कुछ सोच विचार के बाद मैंने घोड़े से जाने की बात की। यद्यपि मैंने कभी अश्वारोहण नहीं किया तथा तथापि मैं अपने से दुर्बल, आयु में बड़े, स्थूल काय, सूखे छुहारे जैसे लोगों को

घोड़े पर मजे से चढ़ते उतरते देख रही थी। अतः मेरी हिम्मत बंधी।

वेदमति दोनों हाथ न होने के कारण घोड़े से नहीं जा सकती थीं, अतः दीदी एवं वेदमति भाभी के लिये पालकी का निश्चय हुआ। रजवा की बड़ी लड़की पिट्ठू पर चढ़ीं। बाकी सब लोग खच्चर से जाने को तैयार हुए। इस बीच रजक जी कुछ असमंजस की स्थिति में थे फैसला नहीं कर पा थे कि पैदल जायें या किसी साधन से । शर्मा जी चुपचाप हम सबसे काफी दूर निकल गये। गाड़ियों की ओट में। उनकी पत्नी उनके साथ थी। भाव–ताव हो रहा था, त्रिपाठी जी, पटेल जी लगे थे। हम दोनों बैठी थी, मैंने अपने थैले में रखे फल, कुछ केले, पपीता, सेव आदि निकाल लिये, इन्हें मैंने परसो हरिद्वार से चलते समय खरीदवाया था। किन्तु विगत रात्रि तबियत ऐसी बिगड़ी की फलाहार का सवाल ही पैदा नहीं हुआ। मैंने सोचा व्यर्थ बोझ ढोकर ले जाने से अच्छा यहीं खतम कर दूँ। एक एक केले घोड़ेवालों को बाँटने लगी। कुछ को पपीता सेव काटकर दे दिया, एकाध टुकड़ा दीदी ने लिया मैंने भी उनके साथ एकाध केला खाया। घोड़े वालों के चेहरों की प्रसन्नता से लग रहा था, जैसे बाजार से लौटी माँ ने उन्हें मनभावनी वस्तु खाने को दी हो। उनके मुख मंडल पर विराजती प्रसन्नता से मुझे वास्तविक देवदर्शन का आभास हुआ।

''माई मैं तुझे पहुँचाऊँगा'' एक ने कहा।

''एक तो मेरे व्रत का छठवाँ दिन था, दूसरे दल में सभी उम्र दराज लोग थे, मैं चाहती थी कि मेरा स्वास्थ्य ठीक रहे ताकि दल के लोगों को परेशानी न हो। इसीलिए इस बात को मन से निकाल दिया कि मेरे पैदल जाने से मैया का प्यार मुझे ज्यादा मिलेगा। बल्कि लगा कि सवारी की चाह में खड़ें लोगों को काम न मिला तो उन्हें न जाने कितनी निराशा होगी। अतः मैंने अपना निश्चिय कायम रखा।

चमकीली धूप खिली थी, जिसमें पहाड़ की चोटियाँ द्युतिमान हो रही थीं, कहीं–कहीं बादल पहाड़ की गोद में सिर छिपाने का

प्रयास कर रहे थे। अभी गरम कपड़ों की आवश्यकता न थी। अतः स्वेटर उतारकर थैले में रख लिया था मैंने। ऊपर ठण्ड होती है ..... गर्म कपड़े साथ रख लें"। घोड़े वाला परिजन की भाँति सलाह दे रहा था। वह बहुत देर से मेरे पीछे लगा था। मैंने भाव पूछा तो विनयपूर्वक बोला "माई जो सब देंगे वहीं दे देना। तुझसे ज्यादा क्यों लूँगा" ?

मैं जानती थी कि बैठने के बाद कई लोग झगड़ा करने लगते हैं किराये को लेकर। अतः उसकी बात पर विश्वास नहीं किया "नहीं. .नहीं, ऐसे नहीं जाऊँगी पहले बताओ कितना लोगे" ? मैंने कहा।

उसने ग्यारह सौ बताया। रजवा की बड़ी बेटी रमा अपनी बहन के लिये पाँच सौ में तय कर रही थी। मुझे वह सही लगा। साढ़े छः किलोमीटर खड़ी चढ़ाई, जानवर के साथ साईस भी हमें वहाँ तक पहुँचायेगा, जिम्मेदारी से ले जायेगा"। सोचा मैंने।

अतः मैंने उससे कहा, पाँच सौ ही देंगे, देखो तुम्हारा साथी जा रहा है। वह मान गया, थोड़े ना–नुकूर के बाद। मैंने त्रिपाठी भइया को आवाज देकर बता दिया। फिर तो वे भी उतने पर ही तैयार हो गये। पालकी बाइस सौ में हुई। बेदमती एवं देवकी दीदी को पालकी में अच्छी प्रकार बैठाया गया । पालकी कहने से सजी–धजी पालकी के भ्रम में न पड़ जायें। यह लकड़ी का एक डिब्बा जैसा होता है मुश्किल से 3 फीट लम्बा दो फीट चौड़ा, नीचे से बंधी रस्सी में एक मजबूत लकड़ी। (बाँस) फंसा दिया जाता है, डिब्बे में सवारी, और दोनों ओर दो–दो आदमी पालकी ढ़ोने के लिए। जहाँ–जहाँ लकड़ी शरीर से टकराती है छिल जाना स्वाभाविक ही है।

घोड़े की गद्दी पतली थी, (पैरदान) जी आई तार मोड़कर पैर रखने के लिये बनाया जाता है जो घोड़े की पीठ पर लगाम आदि के लिऐ बंधे लोहे के जीन से बंधा रहता है। मैंने अपनी शाल भी घोड़े की पीठ पर रख ली, घोड़े वाले ने अपने विशेष अंदाज में मुझे सहारा देकर बैठाया। मैंने साड़ी के नीचे लोवर होटल में ही पहन लिया था

स्पोर्ट शूज मैंने यही पहन लिया था वर्ना चप्पल एक तो गिर जाती दूसरे, तार के गोले में रखने से पांव जख्मी हो जाते। घोड़े वाले ने मेरा बैग घोड़े की जीन में बाँध कर एक तरफ लटकाया। सभी के घोड़े तैयार हो चुके थे जिन्हें सवारी नहीं मिली थी वे अभी अभी आई यात्री बस की ओर लपक गये थे। **(रंगीन चित्र 6 – घुड़साल का दृश्य)**

पटेल जी, त्रिपाठी जी एवं शत्रुहन जी मेरे आगे पीछे थे। मुझे शर्मा जी की चिन्ता हुई, रजक जी भी दिखाई नहीं दे रहे थे।

"भईया शर्मा जी रजक जी कहाँ हैं"। मैंने त्रिपाठी जी से पूछा।

"वह देखो ! आगे–आगे जा रहे हैं"। उन्होंने घोड़े की जीन पकड़े–पकडे कहा। सामने लगभग दो सौ मीटर की दूरी पर वे तीनों घोड़े पर बैठ चले जा रहे थे। बाद में, पता चला कि उन्होंने चार सौ पचास रूपये में घोड़ा तय किया है। थोड़ा आगे नगर निगम का नाका था जहाँ प्रति घोड़े एक सौ पचास रूपये और प्रति डोली 100 रूपयें जमा करना पड़ता है, त्रिपाठी जी ने मेरा शुल्क भी जमा किया। हम दायें बायें देखते, भय से काँपते जी जान से घोड़े की जीन के लोहे को दोनों ओर से दबोचे शनैः शनैः ऊपर चढ़ने लगे। मैं जिस पर बैठी थी उस खच्चरी का नाम शान्ति था। वह सफेद रंग की एकदम ताजादम मोटी–तगड़ी खूबसूरत सी युवती खच्चर थी। मैंने खच्चर वाले से उसका नाम पूछा। उसने राजेन्द्र बताया, वह गढ़वाल का रहने वाला था वह दरम्यानी ऊँचाई का दुबला पतला गोरा सा नौजवान था। मेरे साथ दो खच्चर और हाँक रहा था, एक त्रिपाठी जी का और एक अन्य यात्री का। मेरे साथ चलता वह आगे चलते त्रिपाठी जी के काले खच्चर की पूँछ पकड़े रहता, और आवाज दे देकर तीसरे खच्चर को नियंत्रित करता, मैंने मार्ग की भयावहता से ध्यान हटाने के लिए राजेन्द्र से बातचीत का सिलसिला प्रारंभ किया। "तुम्हारे घर में और कौन कौन हैं" ?

"माँ–पिता जी भाई बहन सभी हैं"।

''अभी शादी नहीं हुई है'' ?

''हो गई है, दो बच्चे हैं मेरे''।

''घर में क्या काम होता है'' ?

''बस खेती होती है थोड़ी बहुत''।

''तुम घोड़े वहीं से लेकर आये हो'' ?

''नहीं भैया, घोड़े किसी और के हैं मैं तो दो सौ रूपये रोजी पर काम करता हूँ''।

''कितने चक्कर हो जाते हैं'' ?

''कभी–कभी दो, कभी तो एक भी नहीं''।

''काम न होने पर भी पैसा मिलता है'' ?

''नहीं, कभी कभी तो एक–एक हफ्ते खड़े रह जाते हैं, घोड़े''। कितने घोड़े हैं उनके पास'' ?

''दो सौ के करीब हैं'' ?

''अब तो एक अक्टूबर से इधर आना बन्द हो जायेगा फिर क्या करोगे'' ?

''घर चले जायेंगे अपने, फिर सीजन में आयेंगे''। शान्ति सधी हुई चाल से सीढ़ीदार संकरे मार्ग पर चली जा रही थी। सुरक्षा के लिए खाई की ओर तार की बाड़ बनाई गई है किन्तु वह इतनी मजबूत नहीं कि घोड़े को खाई में सवार सहित गिरने से रोक सके, वस्तुतः घोड़ों के लिए ही है वह बाड़ । उसके आगे नहीं चलना है। हरी घास के लालच में जब शांति बाड़ से एकदम लगकर चलने लगती, बाड़ के पास नीचे उगे हरिततृण चरने लगती, मेरी जान पिंजरे में कैद पंछी की भाँति फड़फड़ाने लगती, उधर से त्रिपाठी जी आवाज देते ''देख भाई तेरा घोड़ा मुझे गिरायेगा लगता है''।

''नहीं बाबूजी ! चुपचाप बैठे रहो, कुछ नहीं होगा। हमारे घोड़े कभी नहीं गिरते, हाँ यदि आप हड़बड़ायेंगे तो जरूर गिर पड़ेंगे''।

''तीन–तीन घोड़े लेकर क्यों चलते हो ? एक के लिए एक

साइस तो होना ही चाहिए" मैं कहती किन्तु इस बात को वह अनसुना कर देता।

रास्ते में स्थान स्थान पर कुछ लोग झाड़ू लेकर रास्ते की सफाई कर रहे थे, कहीं सीढ़ियों पर घोड़े की लीद या पेशाब देखने को नहीं मिला। घोड़ों के पानी पीने एवं पेशाब करने का स्थान नियत है, वहाँ जाकर वे स्वयं खड़े होकर मूत्र त्याग कर लेते हैं। पहाड़ी झरनों का पानी पीते हैं, वैसे जगह जगह घोड़ों के लिए हौदे रखे हुए हैं, जहाँ वे पानी पीते हैं। जब पहले पहले पहाड़ के एकदम जड़ में शांति घुसती जाने लगी मैं तो डर गई। राजेन्द्र ! देखो यह कहाँ जा रही है भाई" ?

"बाथरूम करेगी, डरो नहीं बैठी रहो"। वह इत्मिनान से कहता। मैं आश्चर्य चकित थी जानवर की समझदारी देखकर। काश! कि हमारे देश के नागरिक इतने प्रतिबद्ध होते स्वच्छता के प्रति तो सड़क के दोनों ओर शाम सबेरे चौक न पूरते। जगह जगह पेयजल की व्यवस्था थी, चाय नाश्ते के छोटे छोटे होटल थे, घोड़े अपने नियत स्थान पर स्वयं रुक जाते, राजेन्द्र उन्हें गुड़ खिलाता, अन्य साईस भी ऐसा ही करते।

पहाड़ काटकर लगभग पाँच फुट चौड़ा मार्ग बनाया गया है, जरा सा गाफ़िल हुए कि पहाड़ से टकरा कर सिर गर्दन का साथ छोड़ जाता।

"सिर बचा के बाबूजी"! ऐसी जगह पर राजेन्द्र हाँक लगाता जाता। सीढ़ियाँ कहीं कहीं जरा पसरी हुईं एवं चक्करदार होतीं कहीं एकदम खड़ी और ऊँची ऊँची जहाँ चढ़ना घोड़े के लिये भी पसीने निकालने वाली बात होती। ऊपर चढ़ते समय सामने झुकना एवं उतरते समय पीछे की ओर झुककर बैठने की शिक्षा दी थी राजेन्द्र ने मैं ध्यानपूर्वक उसकी बात मानने की कोशिश कर रही थी। पालकी वाले बहुत पीछे रहे गये थे हम पीछे मुड़–मुड़कर अपने साथियों को तलाश लेते थे। पैदल वाले हमें काफी ऊपर रास्ते में मिले, उनकी

हिम्मत की प्रशंसा किये बिना रहना असभ्यता होती। हम उनका उत्साहवर्धन करने लिए जय जमुना मैया का उद्घोष करते जा रहे थे। घोड़े पर डोली अथवा पैदल बहुत से लोग वापस आ रहे थे, उनके चेहरों पर थकान के साथ–साथ यमुना उद्गम देखने की सन्तुष्टि नजर आ रही थी। **(रंगीन चित्र 7– मंदिर सहित घाटी)**

एक जगह घोड़ा होटल के पास अपने आप रुक गया। राजेन्द्र ने बताया कि यहाँ थोड़ी देर आराम करते हैं घोड़े। उसने मुझे सम्हालकर उतारा, हाथ एकदम जाम हो गये थे, जीन का लोहा कसकर पकड़े–पकड़े। बार–बार धक्के से कमर पीठ सब दर्द करने लगी थी। हम पत्थर की बेंच पर बैठे, वहाँ से नीचे झाँकने पर सिहरन से भर उठे, हजारों फिट गहरी खाई हरी चुनर ओढ़े हमारे धैर्य की परीक्षा लेने वाली नजर से हमें देख रही थी। अब ठण्डक बढ़ने लगी। कहीं–कहीं भूरे रंग के पहाड़ से घास के मोटे गुच्छे नीचे झूलते नजर आते बीच बीच में एकाध मंदिर और पड़े जहाँ शांति के कदम रुके ही नहीं। जब जब उसकी चाल तेज होती हमारे दिल की धड़कन बेतहाशा बढ़ जाती, हम राजेन्द्र को सचेत करने की नियत से पुकार उठते "राजेन्द्र देखना अपनी घोड़ी को, हमें गिराकर ही मानेगी"।

"बैठी रहो चुपचाप" वह शांति की लगाम पकड़ लेता। जहाँ हम रूके उस होटल में चाय दस रूपये कप और कॉफी 25 रुपये प्रति कप थी, मैंने कॉफी मंगवाई और त्रिपाठी जी सहित सभी साथी जो वहाँ पहुँचे थे सभी ने चाय पी। अभी चाय खत्म नहीं हुई कि पालकी वाले भी आ पहुँचे। देवकी दीदी को पालकी से उतारकर चाय वगैरह पिलायी गई।

फिर से यात्रा प्रारम्भ हुई।

हमें दूर से मंदिर दिखाई देने लगे। हर्ष से हमें रोमांच हो आया। अगम ऊँचाई, भीषण गर्जना एवं प्रचण्ड वेग से नीचे गिरती यमुना मैया के दूर से ही दर्शन कर मन भाव विभोर हो गया। बहुत दूर

ही अपने ठहरने के स्थान पर घोड़े रुक गये। हमें सम्हालकर राजेन्द्र ने उतार दिया और हिदायत दे दी –''तीन बजे तक अवश्य वापस आ जाओ, वर्ना रात यहीं रूकना पड़ेगा। रात में यहाँ कोई नहीं रहता, तीन के बाद घोड़े रोकने से भी नहीं रुकते, दौड़ते हुए सीधे जानकी चट्टी पर जाकर खड़े होते है। हमने अधिक ध्यान नहीं दिया उसकी बातों की ओर। पैदल वाले पीछे थे। घोड़े वाले लगभग पहुँच चुके थे। कुछ मिनट बाद ही दीदी और वेदमती की पालकी आ पहुँची। रगड़ खा–खाकर दीदी की हालत भी खराब हो चुकी थी। उन्हें प्रकृतिस्थ करते कुछ वक्त लगा। यमुना जी के प्रवाह की जो घाटी है उसपर पुल बना है जिसे पारकर मंदिर के दर्शन हेतु जाना पड़ता है। ऊपर दृष्टि गई तो जल की नन्हीं नन्हीं बूंदों के कारण धुँध सी छा रही थी। ठंडक बहुत थी। हमने पुल पार किया। इस तरफ उबलते जल वाला सूर्यकुण्ड है, पोटली में बाँधकर चाँवल डालने से कुछ मिनट में भात बन जाता है। वहाँ दुकानों में बिकने वाले प्रसाद में नये कपड़े में बंधा थोड़ा सा चांवल भी मिलता है। ऊपर पहाड़ की ओर से अन्दर ही अन्दर अज्ञात स्थान से उबलता जल आकर एक कुण्ड में गिर रहा है मोटी धार में वाष्प छोड़ता। जल निरंतर युगों से गिर रहा है किन्तु आज तक कुण्ड से बाहर नहीं छलका। इसी सूर्यकुण्ड से थोड़ा जल लेकर ऊपर यमुनोत्री ग्लेशियर से आते यमुना के हिमतुल्य जल के साथ समानानुपात में मिश्रित कर दो कुण्ड बनाये गये हैं एक महिलाओं के लिए एक पुरूषों के लिए। पूरी तरह घिरा जनाना स्नानागार यात्रियों के लिये मानो मैया का वरदान ही है। कपड़े रखने हेतु चबूतरे बने हुए हैं। कई महिलाएँ तो जैसे अपने घर के स्नानाघर में नहाती हैं वैसे ही नहा रहीं थीं, मेरे पास वस्त्र अधिक नहीं थे बड़ी सुविधा हो गई। सारे कपड़े उतारकर मात्र साड़ी पहनकर नहाने गई। साथ में दीदी को सम्हालकर ले गई। कुण्ड का जल समान्य से जरा ज्यादा उष्ण लगा शायद हमारा शरीर बाहर के वातावरण के सम्पर्क के कारण एकदम

ठण्डा था इसीलिए।

"अबड़ तात हे ओ, नी असनादे सकव"। दीदी ने अपनी मातृभाषा छत्तीसगढ़ी में कहा। इस प्रकार डरने वालों के लिए वहाँ प्लास्टिक के मग्गे पड़े हुए थे। जिनसे कुछ औरते नहा रहीं थीं वेशभूषा से वे मुझे छत्तीसगढ़ी लगीं, मैंने छत्तीसगढ़ी में पूछा– "छत्तीसगढ़ ले आय ह काय जी" ?

"हा हो जी" – उनमें से एक ने मुझे पहचानने की कोशिश की, अपने राज्य से इतनी दूर अपनी भाषा बोलने वाला मिलना बहुत सुखदायक लगा।

"कोन जघा ले आये ह" ?

"जांजगीर चांपा ले जी" अऊ तू मन है ?

"हमन शहर बेलासपुर ले आय हन जी"। मैंने उत्तर दिया।

"देवा तो बहिनी चिटिकुन मग्गा ला"। मैंने दीदी के लिए मग्गा मांग लिया। जिसे उसने तत्काल दे दिया। दो चार मग्गा पानी डालने के बाद उसकी उष्णता सहज हो गई। फिर तो हम दोनों के खूब आनंद उठाया इतनी सर्दी में तप्तकुण्ड में स्नान का। गर्म जल से सेकाकर पूरे शरीर का दर्द नदारद हो गया। ऐसा अनुभव हुआ जैसे दूर से आई थकीहारी बेटी के लिए माँ ने गर्म जल रखा हो, उसके स्नान हेतु। हम तरोताजा होकर कुण्ड से निकले, दीदी ने अपना साया भिगाया था किन्तु मैंने साड़ी भिंगा ली, लोअर के उपर पेटीकोट पहनना बेहद भट्दा लगता इसीलिए मन पक्काकर नीचे लोवर और ऊपर अपर पहन लिया, ऊपर से अपनी रानी रंग की मखमली शाल अच्छी प्रकार ओढ़ ली। गीले होने के कारण बाल खुले थे। किन्तु अब यहाँ कपड़े के लिए किसे कह सकती थी ? मोटे ऊनी कपड़े के लोवर–अपर से मेरा शरीर अच्छी प्रकार ढंका था। ठण्ड से भी राहत थी बात मात्र इतनी थी कि मैं हमेशा साड़ी ही पहनती हूँ। दीदी का हाथ थामें मैं बाहर निकली, और महिलायें भी नहा धो चुकी थीं, इस

बीच शर्मा दम्पति के दर्शन नहीं हुए। पटेल द्वय, वेदमती धनेश्वरी हम दोनों त्रिपाठी जी आदि ने पोटली सूर्यकुण्ड में लटका दी। पर्वत की चोटी पर भैरव मंदिर का कृष्ण ध्वज लहरा रहा था। हमने दूर से ही प्रणाम किया। सूर्य पुत्री के मंदिर में जाकर यथाशक्ति पूजा अर्चना की। वहाँ के पुरोहित जो हमें घुड़साल में ही मिल गये थे हमारे साथ थे उन्होंने हमें एक दूसरे पंडित के सुपुर्द किया जिन्होंने विधिपूर्वक पूजा करवाई और दक्षिणा प्राप्त किया।

ज्ञात हुआ कि जमुनोत्री मंदिर अक्षय तृतीया से दीपावली तक खुलता है। बाकी समय बन्द रहता है यहाँ ठण्ड में रहना मुश्किल है। दर्शनार्थियों का आना भी प्रतिबंधित रहता है। यमुनोत्री का महात्म्य स्कन्दपुराण में वर्णित है नारद जी के पूछने पर स्कन्द जी ने बताया कि यमुनोत्री में स्नान करने से व्यक्ति के सारे पाप धुल जाते हैं एवं तीन रात्रि निवास करने से मनुष्य के जन्म जन्मान्तर के पाप जल कर राख हो जाते हैं, यहाँ यमुना के भाई यम ने तप किया, जिसके फलस्वरूप लोकपाल का पद प्राप्त किया। अग्निदेव ने पहले यहाँ रहकर कठिन तप किया और दिग्पाल का पद प्राप्त किया। उनके निवास के प्रभाव से ही तप्तकुण्ड नाम का सरोवर बन गया जिसे सूर्यकुण्ड भी कहते हैं। 10800 फीट की ऊँचाई से धरातल को देखना अपने आप में एक रोमांचक अनुभव था। देश के कोने कोने एवं विदेशों से भी आये सैलानी अपनी अपनी विशेष वेशभूषा एवं भाषा के साथ एक्यभाव में बह रहे थे। सभी को यमुना मैया के शैशव का दर्शन करना था। यमुना का उद्‌गम यमुनोत्री से लगभग 14 किलोमीटर ऊपर यमुनोत्री हिमनद (ग्लेशियर) से हुआ है जो यमुनोत्री तक आते आते विपुल जल राशि में बदल चुका होता है। ऊँचाई से नीचे गिरने के कारण जल की बून्दे धुएँ का रूप धारणकर धुन्ध का निर्माण करतीं हैं। हमने घर के लिए भी प्रसाद खरीदा, वहाँ से चलने वाले थे कि मुझे एक खास बात याद आई – जानकी चट्‌टी से चलते समय अन्सारी

ने मुझे दस रूपये दिये थे और कहा था कि ऊपर प्रसाद चढ़ा देना। मैं अभिभूत हो गई थी उसकी भावना जानकर। कहाँ हम उसके अलि–अलि के गाने को सुन सुनकर मन ही मन चिढ़ रहे थे और कहाँ वह बुत पूजा विरोधी होने पर भी प्रसाद के लिए पैसे दे रहा है। संयोग से अन्सारी मेरे छोटे बेटे की उम्र का था, मैंने आदतन उसे अन्सारी बेटा कहना प्रारंभ कर दिया था। उसकी सहृदयता देखकर मैंने अपने आपको ओछा अनुभव किया। याद आते ही दस रूपये का प्रसाद प्रमुख मंदिर में चढ़ा दिया। पटेल जी का परिवार, त्रिपाठी दम्पत्ति और मैं साथ–साथ ही थे, हमें राजेन्द्र की हिदायत याद आई और हमने वापसी के उद्देश्य से यमुना के शैशव रूप को आँखों में बसाये, प्रकृति के अनोखे सौन्दर्य का रसास्वादन करते घुड़साल का रूख किया। ठण्ड के कारण यूँ भी अधिक देर वहाँ ठहरने की हिम्मत नहीं थी। पुल के पार एक तिरपाल की छज्जा वाला होटल था वहाँ अंगिठी में आग जल रही थी। कुछ टेबल कुर्सियाँ भी लगी थीं। हमारे घोड़े वाले वहाँ आग ताप रहे थे। त्रिपाठी जी ने अपने और दीदी के लिए चाय तथा मेरे लिए कॉफी लाने को कहा। घोड़े वालों को भी चाय पिलाई गई। जब हम घोड़े पर सवार होकर चलने वाले थे, हमारे दल के पैदल लोग वहाँ पहुँचे, उनके लिए रुकने का कोई अर्थ नहीं था, क्योंकि उन्हें उतरना भी पैदल ही था। रजवा ने पूछने पर बाताया कि शर्मा दम्पत्ति एवं रजक जी उन्हें आधे रास्ते में वापस होते हुए मिले हैं। अब तो हम लोग भी घोड़े पर बैठकर नीचे उतरने लगे। (उतरना, चढ़ने से अधिक खतरनाक था। ढ़ाल पर जब शान्ति टप्–टप् कर तेजी से उतरने लगती तब हमें लगता हजारों फीट नीचे खाई में गिरे। पीछे की ओर तने तने हालत खराब हो रही थी। सीढ़ियों पर रोशनी की कोई व्यवस्था नहीं थी। यूँ तो बिजली के तार फैले थे, जगह जगह स्ट्रीट लाईट टंगी थी परन्तु बहुत दिनो से बन्द थी बताया था राजेन्द्र ने।)

उतरते–उतरते रात हो गई और लोग अभी आये नहीं थे।

जानकी चट्टी में अन्सारी गाड़ी के पास ही मिल गया। रजक जी और शर्मा दम्पत्ति गाड़ी में आराम फरमा रहे थे। डोली वाले भी पहले ही पहुँच चुके थे। हमें हनुमान् चट्टी में रात्रि विश्राम करना था किन्तु आगे जाना संभव न हो सका। वहीं बने एक सुन्दर से साफ–सुथरे दो मंजिले होटल में हमने कमरे की व्यवस्था की। तीन कमरे लिए गये मैं जिस कमरे में थी उसमें, रमा, वेदमती, धनेश्वरी और दीदी भी थीं, हम चारों बड़े वाले डबल बैड पर सोयीं और अलग वाले पर दीदी। मैंने पास में रखे, मेवे के लड्डू में से एक निकालकर खाया और पानी पी लिया। बाकी लोग होटल में भोजन करने गये। दीदी की तबियत ठीक नहीं लग रही थी, इस सतर्कता में मुझे नीद नहीं आ रही थी। घोड़े से पहाड़ की चढ़ाई के कारण अस्थि पंजर ढीले होकर घाव की तरह पीड़ा दे रहे थे। कही–कहीं जहाँ घोड़े के शरीर से रगड़ा रहा था छिल भी गया था। जहाँ तक हो सका मैंने फास्ट रीलिफ लगा लिया। रात्रि के ग्यारह बजे मैं ने सोचा एक बार दीदी को देख लूँ फिर सोऊँ। उनके माथे पर हाथ रखा तो तवे की तरह जल रहा था। त्रिपाठी भैया दो कमरा छोड़कर पुरुष साथियों के साथ सो रहे थे। संकोच छोड़कर उनका दरवाजा खटखटाना पड़ा। क्योंकि दवाईयाँ उन्हीं के पास थीं। आकर उन्होंने बुखार की दवाई दी। कुछ देर मैं उनका माथा दबाती रही। जब उनका बुखार उतरा तो लगभग 1 बज चुके थे। यमुनोत्री से यमुना अवतरण की रोमांचक ध्वनि स्तब्ध वातावरण में गूंज रही थी। उस सन्नाटे में वही एक ध्वनि थी हमारे सारे साथी गहरी निद्रा में लीन थे। मुझे भी नींद आ गई।

(5)

5 नवम्बर दिन बुधवार, आदतन मेरी नींद ब्रम्ह मुहुर्त में तीन बजे खुल गई। मैंने प्रातः स्मरणीय मंत्रों का स्मरण कर हस्तदर्शन किया। पानी पीकर कक्ष में ही इधर उधर टहलती रही, रात्रि में ही बता दिया गया था कि छः बजे हमें जानकी चट्टी से प्रस्थान कर देना है।

अतः नित्यक्रिया हल्के–फुल्के व्यायाम आदि से निवृत्त होने के बाद ही मैंने अन्य बहनों को जगाया। ठण्ड बहुत ज्यादा थी, सभी लोग उठकर अपनी अपनी तैयारी में लगे हुए थे। सबसे बाद में मैंने दीदी को उठाया वे बिस्तर पर पड़ी–पड़ी मेरे क्रियाकलाप देख रहीं थीं। अब उनकी तबियत अच्छी थी। होटल वाले जागकर अंगीठी सुलगा चुके थे। मैंने उनसे कॉफी के लिए कहा किन्तु कॉफी खत्म थी, मैंने सुन रखा था कि पहाड़ों पर 'भेड़–बकरी के दूध का इस्तेमाल होता है, अतः मैंने होटल के मालिक उस सुन्दर से नौजवान से पूछ लिया – भैया दूध यहाँ सबसे अच्छा किसका होता है और क्या भाव मिलता है''?

''माँ जी, भैंस का दूध अच्छा होता है 30 रूपये लीटर मिल जाता है''।

''आपके पास कहाँ से दूध आता है'' ?

''आस पास लोगों ने भैंसे पाल रखी हैं, हमें दे जाते हैं''।

उसके बताने में मुझे कोई बनावट प्रतीत नहीं हुई। मैंने रास्ते में मध्यम कद की गाय भैंसों को आते जाते देखा था, अतः मान लिया। मेरे बैग में कॉफी की एक पुड़िया पड़ी थी जिसमें से थोड़ी कॉफी निकालकर मैंने होटल वाले को दी और मुँह गर्म किया। बाकी लोगों ने चाय पिया, स्नान कहीं प्राकृतिक स्थान पर करना था अतः हमने अपने कपड़े बदल लिए। शर्मा दम्पति ने अपने लिए पृथक कमरा ले रखा था। वे तैयार होकर अपने स्थान पर बैठ चुके थे। हम सभी के यथास्थान बैठ जाने पर प्रातः आठ बजे हमारी गाड़ियाँ हनुमान् चट्टी होते हुए आगे बढ़ीं, अन्सारी रात भर सोने के बाद तैयार होकर न जाने कब से अंगीठी ताप रहा था, उसके शरीर पर कल वाले ही गाढ़े खाकी रंग के गर्म कपड़े थे। उसने गाड़ी में अगरबत्ती जला रखी थी। अभी टेप चालू करने की बात सोची भी न होगी कि हमने बजरंग बली के जैकारे के साथ हनुमान् चालीसा का पाठ प्रारंभ कर दिया। आगे पीछे वाले सभी ने स्वर मे स्वर मिलाया। इसके बाद संकट मोचन हनुमान्

जी की आरती आदि चलती रही। जैसे ही हम आपस में बातें करने लगे, अन्सारी ने अलि मौला अलि मौला शुरू कर दिया। घंटे भर से अधिक चली इस कव्वाली के बाद आज उसने मेरा पीर बादशाह है, मेरा पीर बादशाह है" मुखड़े वाली दूसरी कव्वाली चला दी। बाहर मौसम एकदम साफ था, घाटी के बीच से सूर्योदय हो चुका था। इधर चीड़ के वृक्ष अधिक थे, कहीं कहीं देवदार भी दिखाई दे रहे थे, मार्ग संकरा और भूस्खसलन से बाधित था, किन्तु अन्सारी एक दक्ष बस चालक था, वह गाड़ी निकालता जा रहा था। रास्ते में जब भी उसकी कम्पनी की गाड़ियाँ मिलती, वह गाड़ी रोककर आने वाली बस के ड्राइवर से बातें करता, खिड़की से सिर निकालकर।

अब हम गंगा जी का उद्गम स्थल गंगोत्री की ओर जा रहे थे। मुझे ऐसा लग रहा था जैसे मैं अपने ननिहाल जा रही हूँ, जहाँ खेलने की पूरी आजादी और ढेरों खिलौने, खाने–पीने की ढ़ेरों वस्तुएँ साथ ही मातृ कुल के लोगों का ढ़ेर सारा प्यार हमारी प्रतीक्षा में है। कभी मेरा मन कल के दृश्यों में लौट जाता, मैं दंग थी कि इतनी ऊँचाई पर जगह–जगह बिजली, पानी और स्वच्छता की समुचित व्यवस्था किस प्रकार की जाती होगी ? जहाँ नित्य हजारें लोग स्नान कर रहे हैं वह तप्तकुण्ड भी साफ सुथरा था। यूं तो एक ओर से स्वच्छ जल गिरता था दूसरी ओर से निकल कर यमुना जी के शीतल जल में मिल रहा था। फिर भी स्नानार्थियों द्वारा छोड़ी गई गंदगी साफ करने के लिए लोग सन्नद्ध खड़े थे। पोलीथीन बीनने वाले भी सक्रिय थे, जगह जगह स्लोगन लिखे गये थे – "पोलीथीन का प्रयोग न करें या उचित स्थान पर ही फेंकें, किन्तु हम हिन्दुस्तानियों की यह एक कमजोरी है कि पढ़ते सब कुछ हैं किन्तु पालन बहुत कम करते हैं। ऐसे में इतनी सफाई कुछ मायने रखती है।

अन्सारी ने अपनी कम्पनी की एक गाड़ी खड़ी देखी थी, उतर कर नीचे गया। पता चला कि उसका टायर पंचर है। उसने अपनी

बस की स्टेपनी उसे दे दी और पंचर चक्का रख लिया। गाड़ी आगे चली, स्यान चट्टी, बड़गोटा, ब्रम्हखाल, धरासू होते हुए हमें उत्तर काशी में विश्राम करना था लगभग 110 किलोमीटर की यात्रा आज बस द्वारा करनी थी। एक धाम की यात्रा सफलतापूर्वक कर लेने के कारण हममें आत्म विश्वास बढ़ गया था। अब रजक जी की तबियत भी ठीक थी, पहले दिन की उल्टी से डरे ठाकुर राम पटेल जी सामने की सीट पर लेटे लेटे यात्रा कर रहे थे। उनके पैर के पास उनके समधी जी बैठते, रजक जी को बैठने का उपयुक्त स्थान नहीं मिल रहा था किन्तु वे सन्तुष्ट थे। कभी हमारे साथ, कभी पीछे कभी सीट से नीचे जहाँ मन हो बैठ जाते थे।

अभी अधिक दूर नहीं गये थे कालिन्द पर्वत सामने ही दिखाई दे रहा था, एक पंचर बनाने वाली दुकान देखकर अन्सारी ने बस रोक दी, आस पास बिखरे प्रकृति के अप्रतीम सौन्दर्य के रस में मस्त हम कुछ बावले से हो रहे थे न तो खाने की फिक्र न विश्राम की। न घर पर छोड़े परिजनों या व्यवसाय की। फोटोग्राफी निरंतर चल रही थी। त्रिपाठी जी अपने कैमरे से फोटो ले रहे थे और मैं अपने कैमरे से। जहाँ हम रुके वहाँ एक मंदिर था जहाँ अष्टमी के कारण भजन चल रहा था, वह शंकर जी का मंदिर था,दुर्गा जी की प्रतिमा भी विराजित थी। हमने दर्शन पूजन कर समय का सदुपयोग किया। हमारी छोटी गाड़ी आगे जा चुकी थी। इसीलिए देर हमें विचलित कर रही थी। मुझे स्मरण हो आया -- "आज यदि घर में होती तो क्वांरी पूजन करती, अब यहाँ व्रत कैसे पूर्ण हो ?" सोचते सोचते हम लोग एक पुलिया पर जाकर बैठे, वहाँ एक गाँव था, पहाड़ों से गिरने वाले पानी को पाइप के द्वारा एक बड़ी टंकी में एकत्र किया जाता था, वहाँ पंचायत थी, कच्चे–पक्के मकान बने थे, सीढीदार खेतों में धान की फसल कहीं कहीं पड़ी थी कहीं मिसाई कर पैरा चीड़ के पेड़ों पर सुरक्षित जमाकर रख दिया गया था।

हमें छोटी छोटी लड़कियाँ दिखाई दीं, हमारे बुलाने पर हमारे पास हँसते मुस्कुराते आ गईं। मैनें उनसे उनके गाँव के बारे में जानकारी ली, गाँव में बिजली, पानी, सड़क, स्कूल आदि की सुविधा है, जानवरों से आमदनी बढ़ जाती है। वे मिडिल, प्रायमरी में पढ़ती थीं। मैंने उन्हें दस–दस रूपये देकर पैर छूकर प्रणाम किया। उन्हें देवी स्वरूपा मानकर अष्टमी के दिन क्वांरी पूजन का विधान पूर्ण कराने के लिए माता महागौरी की कृपा से अभिभूत हो गई। जिन्होंने मेरा योगक्षेम निभाया। समय बरबाद न करते हुए हमने सामने बने बहुत बड़े से भवन के आगे जाकर पीने के पानी की याचना की। हमारे पास पीने का पानी था किन्तु इस बहाने मैं वहाँ के किसी व्यक्ति से मिलना चाहती थी। दरवाजा खटखटाने पर मध्यम ऊँचाई वाले एक प्रौढ़ होने जा रहे गौरवर्णी पुरुष ने द्वार खोला। हमने अपना परिचय दिया और उनसे स्थानीय जनजीवन के विषय में कुछ बताने का आग्रह किया। वे भूगर्भ विज्ञान के प्रोफेसर थे जो किसी दूर के महाविद्यालय में अध्यापन करते थे। उन्होंने हमें महत्वपूर्ण सूचनाएँ दी। जैसे 2600 मीटर की ऊँचाई पर बन्दर पूँछ से यमुना जी निकलकर नीचे की ओर बहती है। यह ब्रम्हखाल जनपद जिला उत्तर काशी में स्थित है उन्होंने बताया कि आज जहाँ हिमालय है वहाँ समुद्र था कभी। भूगर्भीय उथल–पुथल के कारण आये भूकम्प के कारण जल की जगह थल और थल की जगह जल हो गया, हिमालय जीवित प्राणी हैं उनकी ऊँचाई बढ़ रही है। अब तक एवरेस्ट की ऊँचाई एक इंच बढ़ चुकी है। हमारे पूछने पर उन्होंने कहा – यहाँ के लोगों का जीवन पर्यटन पर निर्भर है, सैलानियों की सेवा करके ही जीवनयापन करते हैं। चार माह तो पर्यटन धीमा रहता है किन्तु सीजन में इन संकरें रास्तों पर पैदल चलना बहुत मुश्किल होता है। तब दूसरी ओर वाला मार्ग भी खोल दिया जाता है। शास्त्री जी अत्यंत अपनत्व से हमसे बातें कर रहे थे। उनके घर से एक किशोर स्टील के जग में पानी और दो गिलास

लेकर आया था, हम जल पीकर कुछ और पूछने वाले थे कि गाड़ी का पंचर बन गया। गाड़ी इसी मार्ग से जाने वाली थी, अतः पीछे न जाकर हम वहीं खड़े रहे। जब हमने गृह स्वामी को अपने शिक्षक होने की बात कही थी वे विशेष अपनत्व दर्शाने लगे। उनकी आँखें हमें विदा दे रहीं थीं। हम भी मुड़ मुड़कर उन्हें देखते हुए अपनी गाड़ी पर बैठ गये।

नाहक विलम्ब से कुछ लोग खिन्न थे, हम उत्फुल्लित थे। कुछ शुरु करते कि, अन्सारी ने पुराने लोकप्रिय गानों का केसेट लगा दिया। टी.वी. के कारण जिन्हें हम भूल चुके थे वे गाने जैसे – पड़ोसन, सरस्वती चन्द्र, जंगली आदि के। हमने संगीत सुनते सुनते अपनी आँखें बन्द कर ली। खिड़की से आने वाली धूप तीखी हो चुकी थी, अतः हमने गर्म कपड़े उतारकर बैग में रख लिए, त्रिपाठी जी गर्म तासीर वाले हैं, उन्हें केदारनाथ जी को छोड़कर कहीं गर्म कपड़े की आवश्यकता नहीं हुई। मैं खिड़की से गुजरते दृश्यों को कैमरे में कैद करती जा रही थी, पहले दिन की यात्रा से सबक लेकर अब प्रस्थान से पूर्व एक गिलास ग्लूकोज पानी में नीबू का रस डालकर हम लोग पी लेते थे, साथ ही एवोमिन टेबलेट खाकर चलते थे, इन सबसे अधिक मुझे बजरंग बली का सहारा था। मैंने कातर होकर प्रार्थना की– "हे पिता ! मेरी अंगुली पकड़ लो। सहारा दो। तुम्हारी नन्हीं और कमजोर पुत्री तुम्हारी मदद के बिना एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकती। तीर्थयात्रा के मेरे संकल्प को पूर्ण करो प्रभु"। मुझे अनुभव हुआ था जैसे सचमुच उन्होंने मुस्कुरा कर मेरा हाथ पकड़ लिया। मुझे उल्टी तो क्या मितली भी नहीं आ रही थी अब। आज व्रत का आठवाँ दिन था, फलाहार भी कोइ खास नहीं था किन्तु शक्ति और उत्साह में कोई कमी नहीं थी। घोड़े पर चलने से शरीर लगातार झटके खाता रहा था, यहाँ वहाँ जहाँ शरीर घोड़े की हड्डियों से टकराया था लगातार, वहाँ दर्द और सूजन थी, किन्तु उधर ध्यान नहीं जा रहा था, अब तो गंगा मैया का उद्गम देखने की लालसा थी। बरकोटा से

घरासू के लिये मार्ग है।

घरासू से पहले ही एक स्थान पर बस रूकी। यहाँ एक टेबल पर कुछ काँच के गिलास रखे एक महिला और उसकी बेटी नीबू पानी बेच रहीं थीं। नीबू के आधे टुकड़े नीबू गारने वाली सरल मशीन में दबा दबाकर पूरा रस निचोड़ ले रहीं थीं, साथ ही पोदीने के पत्ते रखे थे, पत्थर पर पीस कर उसे भी मिला रहीं थीं, एक बूढ़ा सा दिखने वाला आदमी स्टोव पर आलू के बड़े बड़े मोटे मोटे पराठे सेंक रहा था, आलू के पराठे ही ज्यादातर मिल रहे थे खाने–नाश्ते में। यहाँ आलू अधिक होता है इसीलिए।

हमारी छोटी बस पहले से ही यहाँ आकर रुकी हुई थी, उसके यात्री बाहर निकल कर प्लास्टिक की कुर्सियों पर बैठे थे। 10 रु0 गिलास में नीबू पानी पी रहे थे। वहाँ थोड़ा सा समतल स्थान है, और ठीक उस पहाड़ की जड़ से लगाकर यह होटल है। वहाँ होटल की बगल में पहाड़ से गिरता एक झरना है, जिसके जल को एक मोटे पाइप के द्वारा नीचे गिराया जा रहा है, जहाँ से वह भूमिशात होकर नदी के जल में मिलकर उसे समृद्धकर रहा है। उसी से लोग अपना जीवन चलाते हैं। एकदम स्वच्छ सूर्य किरणों में पिघले चाँदी सा चमकता जल देखकर स्वतः ही स्नान पान की इच्छा जागृत होने लगी। पहाड़ पर एक सौ पचास मीटर ऊँचाई पर एक अद्‌भुत शिव मंदिर की बात ज्ञात हुई। सीढ़ियाँ बनी हुईं थीं, यमुनोत्री की चढ़ाई से सभी पस्त थे, कुछ लोग कहने लगे "अब ऊपर नहीं चढ़ेंगे, नहाये भी नहीं हैं, यहीं नहा लेते हैं, उत्तर काशी पहुँचते पहुँचते नहाने का समय नहीं रहेगा"।

"देखने के लिए इतनी दूर आये हैं, देख ही लेते हैं, कैसा है। चढ़ जायेंगे भोले बाबा की कृपा होगी तो"। वेदमती और उनके परिवार की राय बनी, मैंने भी जाने का विचार किया। त्रिपाठी जी दीदी और छोटी गाड़ी के और लोग वहीं रुक गये।

पहाड़ को काटकर सीढ़ियाँ बनाई गईं हैं जगह–जगह सीढ़ियों के किनारे आराम करने के लिए पहाड़ को काट कर ही बैठने लायक बनाया गया है। सहारे के लिऐ पाइप लगा है। दोनो ओर जंगल के कारण हरा–भरा नजर आ रहा था, मेरी साँस फूल रही थी, वेदमती के लिए चप्पल पहनकर चढ़ना मुश्किल था, उन्होंने अपनी चप्पलें एक स्थान पर रख दीं ताकि वापसी में ले सकें। सीढ़ियों की सफाई में लगे एक वृद्ध व्यक्ति ने हमसे भोजन की याचना की। अन्न तो था नही, कुछ रुपये देकर आगे बढ़ें। गुफा से पहले थोड़ी सी जगह समतल थी, जैसे मंदिर के सामने दालान होता है, उसी प्रकार। एक बड़ा सा हॉल था, चारों ओर खुला पत्थर के खम्भों पर टिका हुआ। बैठने के लिए स्थान बना है चबूतरों के रूप में। उससे कुछ नीचे ही दुर्गाजी का एक सुन्दर सा मंदिर है। अष्टमी की हवन पूजन हो चुकी थी। भोग प्रसाद बँट रहा था, माँ के दर्शन की अभिलाषा पूर्ण हुई। मैंने मन की सम्पूर्ण श्रद्धा से माँ को प्रणाम किया, और भोग लेकर जो सूजी का हलवा था, अपने बैग में यह कहते हुए रख लिया कि कल पारण इसे खाकर ही करूँगी। ऊपर चढ़ने पर हाल में बीस पच्चीस लोगों को नाचते गाते देखा। दक्षिण भारत का दल था। बड़ी बस थी, वे लोग हरिद्वार से ही हमारे आगे पीछे चल रहे थे। पंचर बनवाने के चक्कर में वे आगे आ गये थे, उनकी भाषा हमारी समझ में नहीं आ रही थी, किन्तु गाने के साथ बुर्जुगों का बारी बारी से नाचना, उनके चेहरे पर छायी खुशी का अर्थ कोई भी समझ सकता था। लाइन लगी थी एक छोटा दरवाजा था गुफा का। उसमें एक बार में लाइन से मात्र चार आदमी जा सकते थे। अन्दर अंधेरा और गीला मार्ग था, मैंने देखा कि दोपहर में भी पुजारी जो एक नवयुवक था अन्दर टार्च लेकर जाता था आने वाले लोगो के वस्त्र भीगे रहते थे। अन्दर समय बहुत लग रहा था। ले देकर हमारी बारी आई, तब तक वे लोग जा चुके थे। मेरी बारी आई तो आगे पुजारी चला, टार्च लेकर। ऊँचाई बहुत कम थी, उबड़ खाबड़, संकरा रास्ता था जिसमें से एक आदमी ही अंदर जा सकता

था। मेरे पीछे पटेल जी का परिवार था। लगभग 15 फीट नीचे एक प्राकृतिक कक्ष जैसा था, जिसकी छत से पानी झर रहा था, बीचों बीच एक शिला थी काले रंग की। पानी उसी के ऊपर गिर रहा था, पुजारी ने बताया कि यह स्वनिर्मित शिवलिंग है। जिसके चारों ओर पार्वती, गणेश जी, कार्तिकेय जी की छवि स्वतः निर्मित हुई है। वह एक पिरामिड के आकार की संरचना है, नीचे चौड़ा गोल ऊपर संकरा होता गया है। एक परिक्रमा कर श्रद्धापूर्वक प्रणाम कर प्रकृति की अनुपम रचना के बारे में सोचते बाहर आये। पुरोहित सावधान करता जा रहा था, "सिर बचाना माता जी, बाजू बचाना माता जी, धीरे–धीरे चढ़ो माता जी"। हम जब नीचे उतरे, हमारी बसों में साथी बैठ चुके थे, अब जल को देखकर मुझे याद आया कि मैंने बिना स्नान किये ही पूजा कर ली। "सच कहते हैं कि मन चंगा तो कठौती में गंगा"। मुझे अशुचिता का ख्याल भी नहीं आया। अब नहाने को जी मचल उठा। सब लोग नहा चुके थे, हमें आज उत्तर काशी में विश्राम करना था, समय काफी हो चुका था, मैंने त्रिपाठी जी से कहा कि– "भैया, पाँच मिनट में नहा लूँगी, जरा सा रुक जाईये, उन्होंने कहा– "ठीक है परन्तु इससे ज्यादा वक्त मत लगाना। मैंने अपनी नजरें झुकाई और मान लिया कि मुझे कोई नहीं देख रहा है। पेटीकोट पहनकर मोटे से पाइप के नीचे खड़ी हो गई। मोटी धार सह पाना मुश्किल था, सचमुच पाँच मिनट में ही नहाकर गाड़ी में आ गई थी। अन्सारी हमारा हाल देखकर बौखलाया था, अब तो रुकने के लिये कहना ही बेकार था। उसने गाना लगा दिया, मेरा पीर बादशाह है मेरा पीर बादशाहै। हम लोग खिड़की से बाहर गुजरते दृश्यों में खो गये। कुछ किलोमीटर के अन्तराल पर शहर बसे हुए हैं, हर शहर में बिजली, टेलीफोन के तार खींचे हैं। पक्के घरों वाले आधुनिक शहर इतनी ऊँचाई पर देखकर मन विस्मय से भर उठता था।

धरासू पहुँचे तब तक धूप नर्म होने लगी थी। खिड़की से ठण्डी

हवा अन्दर आने लगी थी, अभी 26 किलोमीटर मार्ग तय करना था, एक जगह तो अन्सारी की त्वरा ने हम सब की जान बचा ली सामने से तेजी से आती एक मिनी बस इतनी तेजी से निकली कि हम सबके मुँह से चीखें निकल गईं। अन्सारी ने गाड़ी इस प्रकार किनारे की कि हम खाई में गिरने से बच गये। एक ओर गगनचुम्बी पर्वतराज के शिखर और एक ओर पाताल की गहराई वाली घाटियाँ, जिनमें से होकर नदियाँ अपना मार्ग तय करतीं हैं, उनकी भयानक गर्जना से कमजोर दिल वैसे ही प्राणगवाँ बैठते।

लघुशंका निवारण, जलपान, चाय--कॉफी इत्यादि के लिये अन्सारी ने अपनी पसंद के होटल के पास गाड़ी रोकी। हमने पहाड़ के नीचे खड़े होकर अपने दल का चित्र खींचा। अब चीड़ एवं देवदार के वृक्षों की बहुतायत दिखाई देने लगी थी, कहीं सेव के पेड़ दिखते, छोटी पत्तियों वाले मुश्किल से 7–8 फीट ऊँचाई वाले, जमीन पर खड़े होकर फल आसानी से तोड़े जा रहे थे। वहाँ बस ज्यादा देर नहीं रुकी, क्योंकि अंधेरा होने के बाद इन क्षेत्रों में यात्रा करना यमराज को न्यौता देने जैसा दुःसाहसीकृत्य था।

हम लोग चार बजे उत्तर काशी पहुँचे। यह एक आधुनिक नगर है, जो पहाड़ की ढाल पर बसा है, 12–15 हजार आबादी वाले आधुनिक शहर में सब प्रकार की बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध हैं। गंगा जी के किनारे बसे इस शहर में शंकर भगवान् का एक विशाल मंदिर है, इसे नाथ मंदिर के नाम से जाना जाता है। बस जहाँ रुकी थी वहाँ से मंदिर पास ही था। हम लोग पैदल ही उधर चल पड़े। हमारी छोटी गाड़ी पहले ही वहाँ पहुँच चुकी थी। दीदी को हमने अपने साथ लिया। मंदिर काफी चढ़ाई पर था, किन्तु सुविधा, सुरक्षा प्रशंसनीय थी। भाँति–भाँति के वृक्ष, पुष्प, लताएँ मंदिर को दिव्य बना रहीं थीं। नवरात्रि का अंतिम दिन होने के कारण दर्शनार्थियों की भीड़ लगी हुई थी। आमने–सामने दो मंदिर है एक तरफ बीच में शिवलिंग किनारे–किनारे,

राम लक्ष्मण सीता आदि की मूर्तियाँ हैं, इस मंदिर के ऊपर एक विशाल अष्टधातु का फरसा लगा है, जिसे मैंने प्रारंभ में ध्वजा समझा था, पूछने पर पता चला कि राजा जनक के यहाँ श्रीराम को विष्णु के अवतार के रूप में पहचानने के बाद परशुराम ने यहीं अर्थात् महेन्द्र गिरि पर तपस्या प्रारंभ कर दी थी, अपना फरसा सदा के लिए एक स्थान पर स्थापित कर दिया था। इस मंदिर के सामने श्रीनाथ जी अर्थात् शंकर भगवान का मंदिर है, 20–25 सीढ़ियाँ चढ़कर हम मंदिर में गये। जाकर भगवान् भूत भावन को श्रद्धा सहित प्रणाम किया। नीचे उतरते हुए एक विदेशी बुर्जुग दम्पत्ति को देखकर हमने उनका छायाचित्र उतार लिया। यह विचार सुखदायक था कि निगुर्ण, निराकार ब्रम्ह को माने वाले आंग्लवासी भी हमारे मंदिरों में आकर आदर भाव व्यक्त कर रहे हैं।

एक बड़ा सा घेरा पारकर आगे गये तो वहाँ महिष मर्दिनी माता दुर्गा की प्रतिमा विराजित थी, अष्टमी का हवन हो रहा था। लोग बैठकर आहुतियाँ डाल रहे थे, अभिलाषा ने सिर उठाया ' "काश ! की पाँच आहुतियाँ डाल पाती" ? व्यवस्थापक जैसे दिखने वाले व्यक्ति से बात की। किन्तु उन्होंने कहा ' "अब हवन पूर्ण हो चुका है आप पूर्णाहुति डाल सकती हैं। मेरा मन रूकने का था किन्तु अन्य साथी आगे बढ़ गये थे। अतः रुक न सकी। वहाँ भागवत् कथा चल रहीं थीं, गरिमामय व्यक्तित्व की धनी एक महिला अत्यंत ओजपूर्ण स्वर में भागवत् कथा कह रहीं थीं। मन तो वहीं ठहर जाने को विकल था किन्तु समय ने मुझे रुकने न दिया। मंदिर की सीढ़ियाँ उतरकर हमने एक बड़ा सा मैदान पार किया। वहाँ बड़े से भवन में शायद धर्मशाला या मंदिर के कक्ष होंगे, हमने प्रवेश किया। वहाँ अन्दर में दुर्गा माता का भव्य मंदिर है। मंदिर के सामने बने हॉल में कुछ स्थानीय महिलाएँ भजन कर रही थीं, ढोलक, हारमोनियम, झाँझ, मंजीरें बज रहे थे। वहाँ मैंने अपनी छोटी गाड़ी के सहयात्रियों रजवा की दोनों पुत्रियों उनकी बहन एवं दोनों पुत्रों को भी उसी महफिल में गाते बजाते देखा। मैं भी

गाने बजाने का शौक रखती हूँ, अतः बैठकर संगत करने लगी। उन्होंने भजन उठाया था – "राधिका गोरी से बिरज की छोरी से, मैया रचा दे मेरो ब्याह", उमर तेरी छोटी है नजर तेरी खोटी है, कैसे रचा दूं तेरो ब्याह"। थोड़ी ही देर में त्रिपाठी जी ने हमें पुकार लिया। हमनें वहाँ का बड़ा बाजार देखा, किसी प्रकार हमारे यहाँ के बाजार से भिन्न न लगा। समस्त आधुनिक वस्तुएँ परम्परागत उत्पाद, ऊनी कपड़ों से बाजार भरा था। हमने स्कार्फ, दास्ताने, मफलर, टोपियाँ आदि खरीदीं। शाम घिर आई थी। ठण्ड बढ़ गई थी, पहाड़ ऊँचे–ऊँचे काले साये से प्रतीत होने लगे थे। उनकी क्रोड़ में बसे शहरों में बिजली की बत्तियाँ जगमगा कर एक अद्‌भुत अनुभूति प्रदान कर रहीं थीं। हम लोग यहीं रुकना चाहते थे, अतः दल के प्रमुख लोग अनुकूल होटल की तलाश में जुटे थे। हमने एक टेबल पर चाय बनाने वाले वृद्ध व्यक्ति से चाय बनवाई, मेरे लिए उसने दूसरी दुकान से कॉफी का बन्दोबस्त किया।

अच्छे होटल मिले भी किन्तु अन्सारी और छोटी गाड़ी के ड्राईवर का मन हमें नेप्टाल में ठहराने का था जो यहाँ से 12 किलोमीटर दूर है, वहाँ ढेरों होटल, लॉज धर्मशालायें हैं, हमारी एक न चली और हम लोग उस रात नेप्टाल के एक सुन्दर से साफ सुथरे दो मंजिले होटल में ठहरे, चार कमरे लिए गये, हमारे कमरे में, मैं दीदी, पटेल जी का परिवार ठहरे, पलंग एक ही था डबल बेड, कमरे और खाली न थे, अतः पटेलजी एवं उनके समधी को जमीन में बिस्तर डालकर सोना पड़ा। हमारे कपड़े गीले थे मैंने सर्वप्रथम बाहर बालकनी में अपने और दीदी के कपड़े सुखा दिये। वहाँ और भी कपड़े सूख रहे थे। यह होटल एकदम पहाड़ की जड़ में बना है, नीचे खड़े होकर पहाड़ को स्पर्श किया जा सकता है। दो चोटियों के बीच में अष्टमी का द्युतिमान चाँद अठखेलियाँ करने लगा था। कभी बादल की ओट में छिप जाता कभी निकल आता। पहाड़ी ढलान पर देवदार के वृक्ष तुहिन कणों को मानों हथेली फैलाकर रोप ले रहे थे। कुछ देर तक यह सुन्दर दृश्य देखती रह गई। त्रिपाठी जी ने वेदमती और दीदी के

लिए कमरे में ही एक थाली भोजन ला दिया, दोनों ने आधा आधा बाँटकर खा लिया। भोजनालय दूर होने के कारण, अचार पापड़ सब्जी आदि की कमी रहीं । हमें प्रातः 5 बजे ही यात्रा प्रारंभ करनी थी, जिन्हें शरीर में तेल या दर्द निवारक फास्ट रिलीफ आदि लगाना था लगाया। सबको व्यस्त देख मैंने दुर्गा सप्तशति से अर्गला स्त्रोत एवं सिद्ध कुंजिका स्त्रोत का पाठ प्रारंभ किया। पुस्तक तो मैं साथ लेकर चली थी, किन्तु यात्रा में होने के कारण ढ़ंग से उपासना नहीं हो पा रही थी। आज महाअष्टमी की रात थी, जब थोड़ी सी प्रार्थना से देवी माँ अपने भक्तों को सुख समृद्धि, ज्ञान–विज्ञान का वरदान देती हैं थोड़ी ही देरमें माँ निद्रा देवी की गोद में लेटे हम सुख स्वप्न देख रहे थे।

(6)

6–10–2011, दिन गुरुवार :–

समय से एक घंटा विलम्ब से हमारी बस नेप्टाल से प्रस्थित हुई। बैठक व्यवस्था पूर्व की भाँति थी, हमने हनुमान् चालीसा के सस्वर गायन के साथ अपनी यात्रा प्रारंभ की। बाल सूर्य की सुनहरी किरणों से जगत में उजाला फैल चुका था। चढ़ाई बढ़ती जा रही थी। पहाड़ों को काटकर मार्ग बनाये गये थे, जो गोल–गोल घूमकर शनैः शैनः ऊपर जाते थे, देखने पर पता ही नहीं चलता था कि कहाँ से चले और किधर जा रहे हैं। पहाड़ों के सीढ़ीदार खेत, सड़क के किनारे लगे केले के पेड़ जो लाल लाल फूलों से सुशोभित हो रहे थे। भाँति–भाँति के पर्वतीय पुष्प एवं वनस्पतियाँ अपने साम्राज्य में स्वछन्द भाव से हवा के साथ झूला झूल रहीं थीं। सड़क के किनारे अब बहुतायत से सेब के बगीचे मिलने लगे थे।

उत्तर काशी से लंकापट्टी 87 कि.मी. पड़ता है। हम मेनरी भटवाड़ी, गंगवानी, झाला और हरसिल होते हुए लंका पट्टी पहुँच गये, भूस्खलन से जगह जगह मार्ग अवरूद्ध था ज्यादातर सीमेन्ट और पत्थर की जोड़ाई कर पहाड़ के किनारे दीवार की तरह उठा दिया गया है जिससे भू–स्खलन पर रोक लग सके। यहाँ से अब बारह

किलोमीटर गंगोत्री का रास्ता शेष था पार करने को। यमुनोत्री से यहाँ की दूरी दो सौ पन्द्रह किलोमीटर है। जबकि ऋषिकेश से लंका चट्टी 135 किलोमीटर है।

अब यहाँ से चढ़ाव उतारवाला मार्ग है। भैंरो घाटी होने को तो 3 किलोमीटर ही है, परन्तु मार्ग दुरूह है। एक स्थान पर पहाड़ के घुमाव पर भूस्खलन से मार्ग अवरूद्ध था, सेना के लोग रास्ता साफ कर रहे थे, थोड़ा रास्ता बना कि अन्सारी ने हमारी बस निकाल ली, हमने माता गंगा का जयकारा लगाया और दूसरे पल दिल थामकर रह गये, आगे बस लहराने लगी, लगा गये हजारों फुट नीचे, किन्तु अन्सारी ने गाड़ी सम्हाल ली।

अब तो गंगोत्री धाम तक बसें जाने लगीं हैं, तीर्थ को अत्याधुनिक ढ़ंग से बसाया गया है। 3140 मीटर की ऊँचाई पर जहाँ से भारत भूमि का पोषण करने माँ गंगा अवतरित होती है, लम्बा चौड़ा चौरस मैदान है जहाँ हमारी बस रुक गई। आगे पक्की सड़कें भव्य द्वार है, जिसके अन्दर पहले चढ़ाई है फिर उतार पर चलते हुए माँ गंगा तक जाना होता है। लगता था किसी स्थान पर छोटी गाड़ी वाले सहयात्री अधिक समय तक रुक गये, वे अभी पहुँचे नहीं थे, त्रिपाठी जी ने मुझसे पटेल परिवार के साथ धीरे धीरे आगे बढ़ने को कहा। ''उन्हें सम्हाल कर तट तक ले जाना होगा''। उन्होंने कहा – मुझमें सब्र का अभाव हो चुका था, अब मैं मैया का दर्शन अविलम्ब करना चाहती थी। अतः पटेल जी के साथ धीरे–धीरे तट की ओर बढ़ने लगी। आवश्यक सामान का थैला मेरे कंधे से लटक रहा था, सुबह के ग्यारह बजे थे आसमान पर सूर्य की किरणें तीखीं हो गईं थीं। तेजी से पैदल चलने के कारण भी अन्दर से गरमी लग आई थी। स्वेटर आदि उतारकर बाँह पर लटका ली थी। जैसे ही ऊँचे पर्वत से पिघली चाँदी की इतनी मोटी धार में गंगाजी को धरती पर उतरने का दृश्य देखा, मैं मानों भावतिरेक में बावली हो गई। मन हुआ दौड़कर जाऊँ

और माँ के गले लग जाऊँ। किन्तु पुराने अनुभव ने कान खींचकर मुझे सचेत किया। ''माँ अभी आवेश में है तेरे प्यार का मान रख तुझे अपने में समाहित कर लेंगी''। बचपन में हम लोग गंगा जी के तटीय ग्राम कोट में रहते थे। वही मेरी पितृ भूमि है। हम 8 माह गंगा जल ही पीते थे स्नान ध्यान आदि जीवन की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति गंगा मैया ही करती थीं। 6 वर्ष छत्तीसगढ़ में निवास के बाद पुनः मुझे गंगा माँ की निकटता प्राप्त हुई। इलाहाबाद शहर से 15 किलोमीटर दूर भीरपुर माण्डा रोड पर मुँगारी ग्राम में मैं वधूबन कर गई। विवाह के पश्चात् पति एवं जेठानी आदि परिजनों के साथ विंध्याचल में देवी पूजन हेतु गई। इतने दिनों में गंगामैया को देखकर जल में कूद पड़ी और डूबने लगी, क्योंकि मुझे तैरना नहीं आता। मेरे पीछे जेठ का लड़का कमलनयन जो उम्र में मुझसे दो वर्ष बड़ा था, वह भी डूबने लगा। एक बुजुर्ग महिला जो मेरी जेठानी की बड़ी बहन थीं, नहाकर सूर्य भगवान् को अर्ध्यदान कर रही थी हड़बड़ाई और सीढ़ियों से उनका पैर फिसल गया, वे भी डूबने लगी, तट पर खलबली मच गई। वहाँ रहने वाले मल्लाह कूदने की तैयारी कर रहे थे कि माँ की कृपा से हम तीनों सीढ़ियों पर आ गये। इतनी बड़ी दुर्घटना होते होते बच गई। इसी अनुभव ने आज मुझे कूदने से रोक लिया। तट पर खड़े होकर मैंने नेत्र भरकर माँ के धरावितरण का दृश्य देखा। आँखों के होने का महत्व समझ में आया ऊँचाई से प्रचण्ड वेग से नीचे गिरती भयानक गर्जना कर रही हैं, हाँय....एँ....एँ.. हाँय....एँ....एँ का ही एक स्वर वातावरण में व्याप्त है। पूरे तट पर स्नानार्थियों का मेला लगा था। देश के कोने कोने से आये विभिन्न भाषा–भाषी लोग अपने अपने दल के साथ, कहीं स्नान कर रहे थे, कहीं कपड़े बदल रहे थे, कही पंडों से पूजा करवा रहे थे। आज दैवात् शर्मा दम्पत्ति हमारे साथ थे। रजक जी और पटेल परिवार के साथ मैं घाट की सीढ़ियों पर अपना सामान रख, त्रिपाठी जी का इंतजार कर रही थीं, मैंने सुन रखा था कि यहाँ

जल इतना शीतल रहता है कि स्नान दूभर होता है। परन्तु मुझे तो सामान्य लग रहा था। पाट बहुत चौड़ा था, धार इतनी तेज कि एक मिनट में सैकड़ों किलोमीटर दूर पहुँचा दे, किन्तु किनारे किनारे गहराई घुटने से नीचे ही थी। मैंने वह स्थान देखने की कोशिश की जहाँ से गंगाजी का उद्‌गम हुआ है परन्तु निराशा हाथ लगी। क्योंकि गंगोत्री ग्लेशियर जो गंगा का वास्तविक उद्‌गम है यहाँ से 18 कि.मी. चढ़ाई पर है, वहाँ तक पहुंचने का पैदल मार्ग है, आम यात्री इसी स्थान को गोमुख मानकर पूजा स्नान कर संतुष्ट हो जाते हैं। जहाँ गंगाजी का उद्‌गम है वहीं वास्तविक गोमुख है, रघुकुल के राजा भागीरथ ने घोर तपस्या कर गंगा माँ को शंकर भगवान् की जटा से मुक्त कराया था। पौराणिक कथा प्रसिद्ध है कि श्रीरामचन्द्र के पूर्वज महाराज सगर ने दिग्विजय हेतु अवश्वमेघ यज्ञ का आयोजन किया। उनके साठ हजार पुत्र (सैनिक) यज्ञ अश्व के साथ दिग्विजय पर चल पड़े। यह सगर महाराज का 99 वाँ अश्वमेध यज्ञ था, सौ पूरे होने पर वे इन्द्र पद के अधिकारी हो जाते, अतः पद जाने के भय से इन्द्र ने यज्ञ का अश्व चुराकर तपोरत कपिल मुनि के आश्रम में बाँध दिया। जब खोजते हुए आकर सैनिकों ने यह दृश्य देखा तो, मुनि को चोर समझकर उनका अपमान किया। जिससे क्रोधित हो उन्होंने सारी सेना अपने क्रोध से भस्म कर दी। उस विशाल अस्थि पर्वत को देखकर जब राजा सगर ने उनकी मुक्ति का उपाय मुनि से पूछा तब उन्होंने कृपापूर्वक बताया कि यदि तुम्हारे वंश का कोई व्यक्ति तप से, ब्रम्हा जी को प्रसन्न कर, उनके कमण्डल में रहने वाली गंगा जी को धरती पर उतार ले, तो इनकी मुक्ति संभव है। तब से लगातार प्रयास होते रहे। असमंजस के पुत्र अंशुमान, उनके पुत्र दिलीप और दिलीप के पुत्र महाराज भगीरथ ने गंगावतरण हेतु तप किया। राजा भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न हो ब्रम्हा जी ने अपने कमंडल से एक पतली धार के रूप में गंगा जी को धरती के लिए छोड़ा परन्तु उनका वेग सम्हालने वाला कौन था तीनों

लोकों में ? लगा जैसे पृथ्वी पर प्रलय आ जायेगी, और वह रसातल चली जायेगी। भागीरथ ने शंकर भगवान् से प्रार्थना की, तब उन्होंने उन्हें अपनी जटाओं में उलझा लिया। गंगा को मैदान तक लेकर आना था, क्योंकि अस्थि पर्वत समुद्र के किनारे पड़े थे। (हिन्द महासागर) शंकर जी की प्रार्थना पर उन्होंने अपनी जटा की एक लट खोल दी। वहाँ से मुक्त हो वे अपने प्रचंड वेग के साथ मैदान की ओर बह चलीं। वह स्थान समुद्र तल से 7818 मीटर की ऊँचाई पर है। हमारे शास्त्र गंगा जी की महिमा का गुणगान करते नहीं थकते जो मनुष्य कलिकाल में गंगा जी का दर्शन स्पर्श, स्नान करता है वह समस्त पापों से दूर हो जाता है। अन्त में बैकुण्ठ वास करता है।

(चित्र 8 – बद्रीनाथ धाम अलकनन्दा का उद्गम)

वह समय ऐसा था जैसे मैं खुले नैनों से समाधि में स्थिति हो गई होऊँ। पाप–पुण्य, स्वर्ग–नरक किसी प्रकार के विचार का कोई स्थान नहीं था मेरे मन में। सामने के प्राकृतिक दृश्यों को अपनी समस्त इन्द्रियों द्वारा ग्रहण कर स्मृति कोष में संरक्षित कर लेना था मुझे। किन्तु इसका भी एहसास नहीं था। सामने गोल–गोल रंग बिरंगे छोटे छोटे पत्थरों से अच्छादित गंगा जी का पाट था। धारा में भी कई पत्थर थे, जिस पर बैठकर नहाया जा सकता था। मैंने सर्वप्रथम स्नान योग्य कपड़े पहने और गंगा मैया को प्रणाम किया। सोचा बैठकर नहा लूँगी, जल में पत्थर बहुत थे अन्दर घुसना खतरनाक था, किन्तु पैर जमाकर नहाने के बारे में सोचा – जैसे ही जल में पैर पड़ा ' अहा ! इतना ठण्डा जल और इतना वेग, सचमुच शंकरजी ने न सम्हाला होता तो सब कुछ बह जाता इस वेग में। मैंने अपना पैर बाहर खींच लिया। सोचा यदि कोई पात्र हो तो जल निकाल निकालकर नहा लें। लोग इसी प्रकार नहा रहे थे। हमारे किसी साथी के पास लोटा आदि नहीं था। हमने जल हेतु पीतल के कलात्मक लोटे हरिद्वार में खरीदे थे, किन्तु उनसे नहाने की इच्छा नही हुई।

मैंने इधर–उधर नजरें फिराई, एक साधु जो कम उम्र का युवक था, दुबला–पतला लंबा सा, लम्बे बालों का सिर पर जूड़ा बना रखा था, वह एक स्टील के लोटे से नहा रहा था। मेरी याचना पर उसने लोटा दे दिया। उसी से हम लोग बारी बारी से नहाये। वस्त्र बदलकर जब सोचा कि उतारे कपड़े जरा गिला कर सुखा लूं जैसे ही जल में कपड़े डाली की मेरी ब्लाउज बहकर न जाने कितनी दूर निकल गई। आगे बढ़कर पकड़ना जीवन से हाथ धोना था। मैंने अपनी साड़ी यहाँ पूजा पाठ के लिए बने एक बड़े से चबूतरे के लोहे के घेरे पर सुखा दी, नजरे उठाई तो त्रिपाठी जी, दीदी के साथ सीढ़ियाँ उतर रहे थे। मैंने आगे बढ़कर उन्हें सम्हाल लिया। नहाने में उनकी मदद करने लगी। मालुम था वे भी अन्दर नहीं घुस सकेंगी, मैंने लोटे के लिए पुनः उसी साधु से निवेदन किया। किन्तु अब वह नहाकर अपने थैले में रखी मूर्तियाँ एवं फोटो निकालकर तट पर बने बरामदे में सजा रहा था, पूजा की तैयारी में था। लोटे में जल भर रखा था। उसने एक स्टील का डिब्बा दे दिया जो उसके भिक्षा आदि रोपने के काम आता होगा शायद।

दीदी के बाद शर्मा दम्पत्ति ने भी इसी डिब्बे से स्नान किया। मेरे मन में साधु के बारे में कुछ उथल–पुथल हो रही थी। "शायद यहीं रहता होगा। पूजा पाठ से मिली दक्षिणा से जीवन चलाता होगा। मैंने सोचा हम सभी उसी से पूजा करायेंगें। डिब्बा लौटाने पहुँची तब तक अभी उसकी तैयारी ही चल रही थी।

"आप कहाँ से आये हैं बेटा"। मैंने पूछा।

"हरिद्वार से माता"।

"किस सम्प्रदाय के हैं"।

"किसी से नहीं, मेरे गुरू हैं"।

"आप साधु कैसे बन गये" ?

बस गुरू जी हमारे गाँव आये थे, भगवान् की कृपा हो गई, चल पड़ा"। उसने निर्विकार भाव से उत्तर दिया।

"घर में कौन कौन हैं" ?

"सभी लोग हैं, माँ–बाप, भाई–बहन आदि"।

"शादी हो गई है" ?

"हाँ, दो बच्चे हैं"।

"मुझे झटका सा लगा"।

"आप बच्चों के प्रति जिम्मेदारी न निभाकर किस मुक्ति की चाह में भटक रहे हैं"?

"बस भगवान् का भजन करते हैं" ?

"भजन घर पर भी कर सकते हैं, कर्तव्यपूर्ण करना भी तो पूजा ही है ईश्वर की"। मैंने इतने दिन सेशांत पड़ी शिक्षिका को नींद से जागते हुए पाया।

"माता–पिता बच्चों को देखते हैं माई"। उसने कहा।

"वे वृद्ध हैं आपके सहारे की उन्हें जरूरत है। मेरी बात मानें! मैं आपकी माँ की तरह हूँ, घूम घामकर दर्शन वर्शन करके घर चले जायें सीधे। घर का काम निपटाकर बाद में चाहे फिर घूम जायें।

चलिए हमारी पूजा करा दीजिये "मैं अभी भी उसे पैसा कमाने के लिए आया ही समझ रही थी।

"मैं दूसरों की पूजा नहीं कराता माई। स्वयं पूजा करता हूँ" वो देखिये पूजा कराने वाले संकल्प करा रहे हैं। उसने एक पंडे की ओर संकेत किया। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मुझसे बातें करने में उसकी कोई रुचि नहीं है।

"इससे लोटा लिया है ऋण है , तीर्थ में कर्ज लादने आई हूँ क्या" ? मैंने विचार किया और सौ रूपये का नोट निकालकर आदर पूर्वक उसे दे दिया, संकोच पूर्वक उसने रुपया ले लिया। "जब घर जाना तो किराये में इसे मिला लेना, समझे ? तुम्हारी माँ रोती होगी तुम्हारे लिये"। मैंने अपनेपन से कहा। मेरी बात सुनकर वह इस प्रकार मुस्कराया जैसे कोई मुर्दा मुस्करा पड़ा हो। अब तक मेरे सहयात्री पूजा

करने बैठ गये थे। मैं भी साथ बैठ गई। यथोचित दान दक्षिणा देकर आशीर्वाद प्राप्त किया हमने। यहाँ फोटोग्राफी की। यहाँ से नंदादेवी पर्वत जो 18 किलोमीटर ऊँचाई पर है, बर्फ की चादर ओढ़े सूर्य की रोशनी में चाँदी के पर्वत सा प्रतीत हो रहा था। एक बात जरा खटकने वाली थी अभी तक की यात्रा में पशु पक्षी बहुत ही कम मिले थे। जबकि मैंने पढ़ा है कि इस क्षेत्र में लंगूर, लाल मुँह के बन्दर, भालू, लोमड़ी, बर्फीले चीते, कस्तुरी मृग, वरड मृग, साही रंग बिरंगी तितलियाँ पायी जातीं हैं मेरी आँखें उन्हें ढूंढ रही थी शायद जन शून्य स्थान उनका आवास हो।

सुरक्षित प्रसाधन निर्मित हैं और सख्ती से इस नियम का पालन करवाया जाता है कि कोई इधर–उधर गंदगी न फैलाये, भले ही यह व्यवस्था सशुल्क है। चलने के पूर्व नये नये लोटों को माँज धोकर हमने श्रद्धापूर्वक गंगोत्री जल रामेश्वरम् में चढ़ाने की अभिलाषा से भरकर सुरक्षित रख लिया। रजक जी ने सभी लोटों को ठीक से बन्द करने का दायित्व निभाया। उस दिन दशहरे का पावन पर्व था, और व्रत का अंतिम दिन। तिथि क्षय के कारण इस बार नवरात्रि आठ दिन की ही थी, पारण का दिन था आज, इसलिये भी मुझे बहुत अच्छा लग रहा था, किन्तु भूख की याद से ही मेरे पेट में बाईं ओर दर्द होने लगा। यह दर्द मेरे जीवन के साथ ही आगे बढ़ रहा है। कई बार बड़े–बड़े चिकित्सकों से जाँच करवाई क़िन्तु कोई परिणाम नहीं निकला, दवाईयों का भी असर नहीं होता। दो दिन कष्ट देकर अपने आप ठीक हो जाता है। कुछ ठीक नहीं कि कब किस स्थान पर शुरू हो जाये ? पहले धीरे धीरे प्रारंभ होता है, फिर बढ़ जाता है, मैंने हमेशा की तरह उधर ध्यान नहीं दिया। मंदिरों के दर्शन हेतु हम सीढ़ियाँ चढ़ने लगे। **(रंगीन चित्र 9–गंगावतरण का दृश्य)**

गंगोत्री में गंगा दर्शन के अतिरिक्त भागीरथी जी का विशाल मंदिर है। इसका निर्माण पिछली सदी के प्रारंभ में गोरखा सरदार अमर

सिंह थापा ने करवाया था जिसका जीर्णोद्वारा जयपुर दरबार ने किया। इसके नीचे भगीरथ शिला है जिस पर बैठकर महाराज भगीरथ ने कठिन तप किया और भागीरथी को अवतरित किया। मंदिर में गंगा, जमुना, सरस्वती, लक्ष्मी जी, पार्वती जी एवं अन्नपूर्णा जी की मूर्तियाँ भी हैं। महाराज भगीरथ हाथ जोड़े सम्मुख खड़े हैं। यहाँ पूजन के समस्त उपकरण स्वर्ण के हैं। यहाँ देवदार के वन हैं, जो पहाड़ों को हरी चुनरी पहनाये हुए प्रतीत होते हैं और भी बहुतेरी वनस्पतियाँ, हिमालयी बलूत, सर्वाधिक प्रसिद्ध है। बुरांस, सफेद सरो, स्वच्छ पेड़, सदाबहार वृक्ष तथा नीले देवदार आदि, जब बलूत पेड़ विलीन होते हैं तो पेंगर, कबासी, कुंजला रींगल उसकी जगह ले लेते हैं। पर्णांका तथा विपर्पी शैवाक बहुतायत से पाये जाते हैं। (घाट पर रहने वालों से पूछने पर पता चला यह सब कुछ) गंगोत्री से थोड़ा नीचे केदार गंगा का संगम है और वहाँ से एक फर्लांग नीचे बहुत ऊपर से गंगा शिवलिंग के ऊपर गिरतीं हैं। समीप ही गौरी कुण्ड है। अनेक धर्मशालाएँ बनी हैं। मंदिर में भी विश्राम का स्थान है। हमने पंक्तिबद्ध हो मंदिरों के दर्शन किये। उस समय तक पेट का दर्द बहुत बढ़ गया था और चलना असंभव था। मैंने संकोच छोड़कर त्रिपाठी जी से निवेदन किया कि थोड़ी देर विश्राम हेतु स्थान तलाशें। पूछने पर एक कक्ष मिल गया, जहाँ पलंग भी था वह एक बड़ा हॉल था, यात्रियों के विश्राम के लिए। एक घंटे विश्राम के पश्चात् थोड़ा आराम का अनुभव हुआ, तब हम लोग वापसी के लिए निकले।

दोपहर ढल रही थी और अब तक हमने कुछ भी नहीं खाया था। अतः एक साफ सुथरे होटल में जाकर बैठे। त्रिपाठी जी ने मेरे लिए कॉफी मंगवाई और वे दोनों हल्का फुल्का जलपान करने लगे। हमारी छोटी गाड़ी के लोग वहाँ से जलपान करके निकले थे। सीढ़ियों के दोनों ओर दुकानें सजी हुईं थीं जिनमें मैदानों की तरह ही प्रचलन की सारी वस्तुयें बिक रही थीं। प्रसाद, पूजन सामग्री, श्रृंगार प्रसाधन, ऊनी कपड़ों की दुकानें केसेट, सीडी आदि की दुकानें थीं। यथा रुचि

खरीददारी करते हुए हम लोग बस के पास पहुँचे तो सभी सहयात्री हमारी ही प्रतीक्षा कर रहे थे। गंगा मैया को प्रणाम कर हम वापस चल पड़े। अन्सारी कुछ नाराज लग रहा था, क्योंकि उसे लग रहा था कि दिन दिन में उत्तर काशी नहीं पहुँच पायेंगे। यह रास्ता और भी कठिन और खतरनाक है, रात में गाड़ी चलना मौत को दावत देने के समान ही है। हमारी बैठक व्यवस्था पूर्व की भाँति ही थी। हाँ खरीददारी में लगे छोटी गाड़ी के यात्री इस बार हमसे काफी पीछे चल रहे थे। कार्यक्रम के अनुसार हमें सेव के बगीचे में जाना था चाहे कुछ पल के लिए ही क्यों न हो। एक जगह गाड़ी रुकी, ठेले में गंगाबेर से लगभग तिगुने आकार की हरी नाशपातियाँ बिक रहीं थीं। कच्ची समझकर मैंने नहीं खरीदा, त्रिपाठी जी ने खरीद लिया। मैंने खाकर देखा, उसका स्वाद मुझे बहुत अच्छा लगा, बेहद मीठा, जरा सी खटास लिये हुए, एकदम नरम और रसीला, दो तीन खा लिया था मैंने माँग माँगकर। आज तक पछता रही हूँ कि खरीदा क्यों नहीं मैंने।

अब सड़क के किनारे के सेव के बगीचे नजर आ रहे थे। बगीचों में धरती पर सेव बिखरे पड़े थे। जिन्हें देखकर मन उठाने को मचल उठता था।

आगे बढ़कर जहाँ बड़े–बड़े बाँस के टोकरों में सेव सजाकर ट्रकों में लादा जा रहा था, हमने अंसारी से गाड़ी रूकवाई और पैदल चलकर बगीचे के द्वार तक पहुँचे। वह व्यवस्थित एवं सुरक्षित बाग था। रखवालों से पूछ कर हम लोग फोटोग्राफी के बहाने बाग में घुसे। सेव के पेड़ अधिक ऊँचे नहीं थे। नीचे खड़े होकर उन्हें तोड़ा जा रहा था। धरती पर घास की मोटी परत थी, जिससे गिरने पर भी सेव क्षतिग्रस्त नहीं होते। पेड़ व्यवस्थित ढ़ंग से लगाये गये हैं। बड़े--बड़े ताजे–ताजे, फल चारों ओर बिखरे पड़े थे। उनकी मोहक सुगंध से मन ऐसा मुग्ध हुआ कि हम अपना पद वय आदि विस्मृत कर बाल मनोवृत्ति के गुलाम बन गये। सेव बिनना शुरू कर दिया। जबकि हमें

मना किया गया था कि यहाँ न सेव मुफ्त में मिलेंगे न ही बेचे जायेंगे। ठेकेदार का सामान है सारा। मैंने भी उठाये थे दो चार परन्तु साथ चल रहे युवक के मना करने पर झेंप सहित मैंने नीचे रख दिये। यहाँ मुझे अपने छत्तीसगढ़ की याद आई वहाँ तो आने वाले व्यक्ति को मेहमान मानकर एक एक फल अवश्य भेंट करते। यहाँ खरीदने पर भी नहीं मिल रहा था। शर्माजी भी थे साथ में। हम बातों में मशगुल थे तब तक दोनों जेबे भरली और चुपचाप वापस लौट गये। ये बात और है कि बाद में मुझे भी दिया। हमने सेव की खेती के बारे में उनसे प्रश्न किया। पौधे लगाने के बारे में जिज्ञासा जताई। उन्होंने बताया कि इसके उत्पादन के लिए ठण्डी बर्फिली जलवायु आवश्यक है। यहाँ भी उत्तर काशी के बाद आपको नहीं मिलेंगे ये पेड़। ठेकेदार के कर्मचारी दो सुन्दर गोरे नारे ऊँचे पूरे युवक थे, उन्होंने जर्किन फुल पैन्ट पहन रखा था, हमने आग्रह करके उनके साथ फोटो खिंचवाई। तीन सुन्दर लड़कियाँ भी सेव तोड़ने का काम कर रही थीं। मैंने उन्हें पास बुलाया, उनका नाम पूछा, उनमे एक नीला थी एक तारा और एक सोहा फोटो खींचवाने के लिये प्रसन्नतापूर्वक तैयार हो गईं। उन्होंने अपने मैले हाथों से अपने सूखे बालों की लटें संवारी, ओढ़नी ठीक की। चेहरे पर मुस्कराहट लाकर तीनों मुझसे चिपक कर खड़ी हो गईं। वे मुक्तहास से पूरे बाग को गुंजित कर रहीं थीं।

त्रिपाठी जी ने हमारी तस्वीर उतारी।

"मैंने उस समय साड़ी के ऊपर स्वेटर पहन रखा था। वे सलवार कुर्ता पहनें थी ओढ़नी कंधे से होकर कमर में हल्की गाँठ से बंधी थी। चेहरे मोहरे से हम सगी माता पुत्रियाँ लग रहीं थीं। फिर उनका सहज अपनापन मुझसे चिपककर कंधे पर सिर रखकर खड़े होने, बात बात पर खिलखिलाने ने मन के सारे कलुष जला डाले। **(रंगीन चित्र 10– सोहा, तारा–नीला सहित सेब के बाग में लेखिका)**

"मैं तुम लोगों को बेटी कहूँ" मैंने पूछा।

"जरूर आण्टी जी हम आप की बेटी ही हैं" तारा ने कहा था उसकी उम्र नीला से कुछ कम थी।

"आप बहुत अच्छी हैं आण्टी जी"। नीला बोली।

"तुम तीनों सबसे अच्छी हो, तुम्हारी फोटो देखकर तुम्हें याद किया करूँगी मैं। मैंने सच्ची बात कही थी। युवकों के साथ भी फोटो खिचवाये गये। चन्द पल बाद जब हम बाग से निकल रहे थे। भावों का एक पूरा संसार पीछे छूट रहा था। सोहा, तारा–नीला ऐसी आँखों से हमें देख रही थी, जैसे माँ उन्हें घर पर छोड़कर कहीं चली जा रही हो।

(7)

7–10–2011 शुक्रवार केदारजी की यात्रा :–

विगत रात्रि अर्थात् 6–10–2011 दिन गुरूवार को रात्रि आठ बजे हम लोग उत्तर काशी पहुँच गये थे। नेप्टाल, कल रात्रि वाला ही होटल। मेरा पारण होटल के भोजन से ही हो चुका था। मंदिर का प्रसाद पहले ले लिया। उसके बाद जो उपलब्ध हुआ उसे ही छप्पन भोग समझा। घर के भोजन का स्वाद महंगे से महंगे होटल के भोजन में नहीं मिलता। प्रातः जल्दी उठकर कल के सुखाये अपने तथा दीदी के कपड़े समेटे, नित्यक्रिया से निवृत्त होकर, हल्का फुल्का योगासन किया, आज कहीं बाहर नहाने का कार्यक्रम नहीं था। अतः होटल से दो बाल्टी गर्म जल मंगवाकर दीदी और मैंने स्नान किया। उत्तर काशी की बर्फिली ठण्ड में गर्म जल से स्नान का सुख अवर्णनीय है। होटल के ठीक सामने से होकर गंगा जी बह रहीं हैं और पीछे पर्वत राज हिमालय खड़ें है। लगता है यशस्वीनी सुता को परदेश जाते देख रहे हैं। किन्तु यहाँ कोई घाट न दिखा। इसीलिए सबने होटल में ही स्नान किया। हमने डेरा डंडा समेटा। त्रिपाठी जी, पटेल जी ने जाकर होटल का हिसाब चुकाया, सामान उतारा जाने लगा। सीढ़ियों के बाद चबूतरे नुमा आँगन था, सीढ़ियों से जैसे ही उतरते हैं एक देवदार का वृक्ष

मिलता है, मैंने मन ही मन उसे अलविदा कहा। कुछ माँगने को थोड़ी मुड़ी हथेली जैसे उसके पत्ते प्रातः की उष्मा से स्नानकर जैसे सूर्य से और उष्मा माँग रहे थे। हम लोग बस के पास इकट्ठे हो रहे थे कि रजवा की लड़की रमा ने त्रिपाठी जी को बुलाकर कुछ कहा, जिसे सुनकर वे अमर्ष से भर उठे, क्रोध के चिन्ह उनके ऊँचे माथे पर स्पष्ट दिखाई देने लगे थे।

"ठीक है, अपने साथ बैठा लेंगे, आप लोगों को अपना समझकर साथ लेकर हमने गलती की। अपना समझकर ही बैठाये थे आपलोगों के साथ। उसकी उम्र है इस बस में सफर करने की"। हम सभी पास आये। पता चला कि रमा ने दीदी को छोटी बस में बैठने देने से मना कर दिया। वह भी स्पष्ट, कहने लगी हमारी बुआ को हमारे साथ बैठाइये, इनको अपने साथ"। एक तीखी झड़प के बाद उनकी बुआ छोटी गाड़ी में चली गई। और दीदी हमारे पास। उन्हें अपनी जगह पर बैठा दिया मैंने खिड़की के पास। और स्वयं बीच में बैठी। बजरंग बली की कृपा से तबियत नहीं बिगड़ी मेरी। बाद में उन्हें इस घृष्टता की कीमत चुकानी पड़ी, छोटी गाड़ी का पृथक किराया उन्हें देना पड़ा जबकि दोनों गाड़ियों के किराये एक साथ तय किये गये थे और हम सभी बराबर बराबर देने वाले थे। उन्हें लगभग 3 हजार रुपये अतिरिक्त देने पड़े।

बाकी सब यथावत बैठे, पटेल जी सामने की सीट पर लेटे और रजक जी कभी पीछे कभी आगे बैठते रहे।

आज प्रातः ही सबका मन खराब हो गया था, मैं त्रिपाठी जी को हनुमान् चालीसा शुरू करने के लिए नहीं कह सकी। मन ही मन उनकी प्रार्थना की। अन्सारी ने अलि मौला का टेप चला दिया। हमारी बस लगभग सात बजे नेप्टाल से रवाना हुई। ठण्ड काफी थी। अतः हमने सिर से पैर तक गर्म कपड़े से ढाँक रखा था स्वयं को।

"अच्छा हुआ जो दीदी हमारे पास आ गईं, देखा आपने वे लोग

जहाँ–तहाँ, खाने पीने खरीद फरोख्त करने उतर जाते हैं, दीदी बस में अकेली रहती थीं। हमें कितनी फिक्र रहती थी। अब कम से कम हम साथ तो हैं, समझाकर मैंने त्रिपाठी जी को शान्त करने का प्रयास किया। कुछ देर बाद वे सामान्य हो गये और हम लोग अलि मौला की प्रतिद्वंदिता में जय हनुमान ज्ञान गुन सागर, जय कपिस तिहुँ लोग उजागर गाने लगे। आगे पीछे के साथियों ने हमारा साथ दिया। बस के अन्दर का वातावरण फिर से हल्का हो गया।

हम लोग,उत्तर काशी से धरासू वापस आये, यहाँ से टिहरी। टिहरी से केदारनाथ जी के लिये मार्ग अलग हो गया हैं। वहाँ से घनसाली होते हुए चिरबिटिया पहुँचना था। इसके आगे तिलबाड़ा में हमें रात्रि विश्राम करना था। बस लहराती बलखाती मंदाकिनी नदी के उद्‌गम की ओर बढ़ी जा रही थी, मौसम एक दम साफ था, कहीं –कहीं पहाड़ की तराई में चोटी से नीचे बादल दिखाई देते थे। यह हमारे लिए बड़ा आश्चर्यजनक मंजर था जैसे पर्वतराज के हृदय में, भरा गुबार हों ये बादल। दोपहर में ठंड बहुत कम हो गई थी। हमने अपने गर्म कपड़े उतारकर रख दिए। बीच बीच में उत्तर काशी में खरीदे गये सेव का भोग लगाते रहे। मैंने घर से चलने से पहले ही काजू किसमिस, बादाम, मूँगफल्ली, छोहारे, मखाना, सोंठ हल्दी गुड़ के साथ सिंघाड़े के आटे को घी में भूनकर लड्‌डू बना लिए थे। यह एक पौष्टिक आहार है, व्रत समाप्ति पर भी कुछ लड्‌डू बचे हुए थे जिसे हम लोग खाते जा रहे थे। जहाँ जलपान गृह मिलता हम लोग उतरकर चाय नाश्ता कर लेते। नगाधिराज के उस अंग को मैं आँखे भरकर देखती, मन ही मन कहती "नाना जी आ ही गई तुम्हारी पोती, तुम्हारी गोद में।" किन्तु क्या करें तुम्हें सम्पूर्ण रूप से एक साथ देखने योग्य आँखों की शक्ति नहीं है।

"अन्सारी जहाँ गाड़ी रोकता, एकदम शांत भाव से हमसे जरा दूरी बनाकर चाय नाश्ता करता, देर होती देखकर जल्दी मचाता –

''रात में गाड़ी रोक ली जाती है, आप लोग ही जानो। हम तो जहाँ रात हुई गाड़ी रोक देंगे, मार थोड़ी खानी है पुलिस वालों की''।

त्रिपाठी जी ने भजन गाना शुरू किया, ''राधिका गोरी से बिरिज की छोरी से मैया रचा दो मेरो ब्याह, हम सब गाने लगे। पीछे बैठे वाजपेयी जी भी भजन उठाने लगे – ''बजरंग बली मेरी नाव चली जरा कृपा की बल्ली लगा देना, मेरी नैया पार लगा देना'', मैंने भी भजन सुनाया – गौरा ढूँढ़ रही परवत पर शिव को पति बनाने को, ना चाहिए मुझे माथ की बिन्दी माथ सजाने को मुझे तो चाहिए प्रभु प्रेम की माला भजन कराने को गौरा ढूँढ़ रही पर्वत पर ....।'' मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था कि जैसे–त्रिपुर सुन्दरी, किशोरी, पार्वती सचमुच अपने पति श्री भूत भावन को ढूँढ़ रहीं हैं। कभी इस पर्वत कभी उस पर्वत, नदियों के तट पर, बरगद की छाँव में, या घने वनों में, जहाँ समाधि लगाये भोले बाबा के मिलने की सम्भावना है। उनके मन में शिव के प्रति भक्ति है, प्रेम है, समर्पण है, भौतिक संसाधनों का कोई महत्व नहीं है उनके लिये। महल, अटारी, दास–दासियाँ, दिव्य सवारी, वस्त्र आभूषण की कोई चाह नहीं । यह राजकुमारी महेश्वर के प्रेम की भूखी हैं। पूर्वजन्म में, छोटी सी नादानी के कारण उन्होंने अपना पत्नी पद खो दिया था। (राम लक्ष्मण को वन में भटकते देखकर मोहग्रस्त हो गईं थीं, सीता का रूप बनाकर श्रीराम की परीक्षा ली और शिवजी के पूछने पर असत्य कथन किया, जिससे दुःखी होकर प्रभु ने उन्हें अपने दायें अंग में आसन दिया। शिव संकल्प किन्ह मन माही, एहि तन सति भेंट अब नाहीं'' उन्होंने माता का रूप बनाया, माता का स्थान पत्नी को कैसे दिया जा सकता है ? पिता गृह यज्ञ में अनामंत्रित होने पर भी जिद्द करके गईं और पति का अपमान देख योगाग्नि में देह भस्मकर डाली। आज तक पति के खोये प्रेम को पाने के लिये तड़प रहा है उनका हृदय, नूतन जन्म, पाकर भी पूर्व की स्मृतियाँ उन्हें शिव की ओर आकर्षित कर रहीं हैं वे कठोर तप कर रही हैं)

मंदाकिनी की रजतधारा के साथ साथ ऊपर चढ़ते हुए हम तिलवाड़ा पहुँचे। यह एक भयावह घाटी है यहाँ एक सुरंग से होकर बाहर जाना पड़ता है। टिहरी से आने वाला मार्ग यहाँ केदारनाथ जी के मार्ग से मिल जाता है। तिलवाड़ा से दस किलोमीटर की दूरी पर अगस्त मुनि नामक स्थान है। कहते हैं मंदाकिनी के इस सुरम्य तट पर उन्होंने तप किया था। कुण्ड नामक स्थान यहाँ से पन्दह्र किलोमीटर है। आगे पाँच किलोमीटर पर शिव जी की नगरी गुप्तकाशी है, यहाँ कण–कण में शिव व्याप्त हैं। गुप्तकाशी से नाला ग्यारह किलोमीटर है, यहाँ भगवती दुर्गा की पूजा ललिता देवी के नाम से होती है। यहाँ से नारायण कोटि डेढ़ किलोमीटर है जहाँ से पार होते हुए रामपुर के लिये मार्ग है। आगे तीन किलोमीटर पर सोनप्रयाग नामक पवित्र तीर्थ है।

सोनप्रयाग से चार किलामीटर आगे त्रियुगी नारायण नामक स्थान है, यहाँ से केदारनाथ अट्‌ठारह किलोमीटर है। यहाँ भगवान् विष्णु का प्राचीन मंदिर है, ब्रम्हकुण्ड, रूद्रकुण्ड एवं सरस्वती कुण्ड हैं। रात हो जाने के कारण हमें दर्शन स्थगित कर देना पड़ा।

गौरी कुण्ड से 12 कि.मी. दूर सीतापुर नामक स्थान पर अन्सारी ने बस रोकी। रात्रि के आठ बज चुके थे, हम लोग थककर चूर हो चुके थे। अंग–अंग दर्द से टूट रहा था। एक साफ सुथरे सर्वसुविधायुक्त होटल में त्रिपाठी जी आदि ने जाकर चार कमरे ले लिए। हमारी छोटी गाड़ी किसी अन्य होटल में रुकी थी, उस गाड़ी में रजवा जी की पुत्रियाँ बहन एवं दो पुत्र थे, इसलिये सम्पर्क बना हुआ था। वे सब उम्रदार समझदार थे, इसीलिए कोई फिक्र की बात नहीं थी। यहाँ बहुत से भव्य लॉज, रिसार्ट एवं होटल बने हुए हैं। इतनी ऊँचाई पर अपने शहर जैसी सारी सुविधायें देखकर मैं बड़े आश्चर्य में थी, स्वच्छता इतनी कि प्रशंसा किये बिना रहा न जाये। थोड़ी सी समतल जगह थी जिसे बराबर करके बड़ा किया गया था। होटल में तलघर भी था। हमारे कमरे नीचे ही थे। अतः सीढ़ियाँ उतर कर हम

नीचे पहुँचे। यहाँ तीन बिस्तरों वाले एक ही कमरे में मैं देवकी दीदी और त्रिपाठी भैया रूके। हमने हिम्मत करके हाथ मुँह धोया, दीदी की हालत तो और खराब थी। ठण्ड के मारे हाथ पैर ठिठुरे जा रहे थे। पलंग पर साफ सुथरे गद्दे तकिये कंबल देखकर होटल प्रबंधन के लिए अपने आप दुआ निकल पड़ी दिल से। हम दोनों बहने डबल बेड पर कंबल ओढ़कर बैठ गईं। परन्तु मुझे कर्तव्य बोध ने हिम्मत दी। (उत्तर काशी में) नेप्टाल होटल में नहाने के बाद हम कपड़े नहीं सुखा पाये थे। अतः तीनों के गीले कपड़े सीढ़ी के सामने प्रवेश मार्ग के पास टंगी रस्सी पर सुखा दिये। यह स्थान पहाड़ की जड़ में था। दो चोटियों के बीच से एकादशी का निर्मल शशि झाँक रहा था। शीतल स्वच्छ निशा मन में मोद भरने लगी। कुछ लिखने को मन मचलने लगा, किन्तु मन इतना मुग्ध हुआ कि कुछ लिखा भी न गया। उस समय प्राकृतिक दृश्यों के सौन्दर्यपान से मन को अवकाश कहाँ था ? मनुष्य की कारीगरी, उसकी मेहनत देखने लायक थी। जहाँ स्थान नहीं वहाँ भी इतनी सुन्दर सुव्यवस्था का निर्माण किया। बगल वाले कमरे में पटेल जी सपरिवार थे, उन्हीं के साथ रजक जी भी थे। शर्मा दम्पति ने पृथक कमरा ले लिया था। रजवा और वाजपेयी जी ने एक साथ कमरा ले लिए था। ये चारों ऊपर ठहरे थे। दिन भर भोजन नहीं हुआ था, फिर भी न तो कमजोरी लग रही थी नहीं भूख प्यास का एहसास हो रहा था। बस एक ही धुन थी जगत्पिता श्री केदारनाथ जी के दर्शन की। फिर भी शरीर धर्म की बात यादकर हम लोगों ने ऊपर जाकर भोजन किया। रोटियाँ मोटी थी, सब्जी आदि ज्यादा दिखाई ही नहीं देती थी बाजारों में, तो खाने को क्या मिलेगी, आलू प्याज की सब्जी मिली, चाँवल मोटा था, किन्तु हमने रूचि से भोजन किया। अपने बिलासपुर जैसा चाँवल तो कहीं खाने को मिला ही नहीं। पानी इतना ठण्डा था कि पीना असंभव था। हमने होटल से एक जग कुनकुना जल माँग लिया। तब कहीं प्यास बुझी ये कमरे हमने एक

दिन और दो रातों के लिए आरक्षित करवाया था। प्रातः पाँच बजे आवश्यक सामान लेकर गौरीकुण्ड की ओर प्रस्थान करना था।

एक बात और बतादूँ, मैंने बड़े जतन से बिलासपुर में पाँच सौ रूपये का स्मार्ट सीम का रीचार्ज करवाया था, सम्पर्क के लिये अपने सहयात्रियों के नंबर दो दो जगह नोट किये, किन्तु हरिद्वार में जो नेटवर्क समाप्त हुआ तो फिर हरिद्वार आकर ही चालू हुआ। त्रिपाठी जी का सिम विडियोकॉन का था जिसने हर स्थान पर साथ दिया। उन्हीं के मोबाईल से घर पर अपनी कुशलता की सूचना देती थी। यहाँ भी वहीं किया। प्रकृति की अनोखी छटा में रमते हुए हम लोग सो गये।

(8)

8–10–2011 दिन शनिवार :–

प्रातः 4 बजे ही उठकर मैंने सूखते कपड़े उठाये, कमरे में बिखरे सामान में से आवश्यक सामान अपने साथ ले जाने वाले बैग में रखा। ठण्ड से बचने के लिये आज इनर–अपर, स्वेटर, शाल सब कुछ रख लिया। दीदी का सामान भी एकत्र करके साधारण व्यायाम इत्यादि के बाद नित्यक्रिया से निवृत्त होकर मैंने उन दोनों को जगाया। मेरी खटपट सुनकर वे जाग ही रहे थे। मैंने बगल के कमरे की टोह ली। वे लोग भी तैयारी कर रहे थे।

हम सभी 8.30 बजे तक बस में बैठ चुके थे। सुबह की बाल किरणों के साथ हम लोग गौरीकुण्ड में थे। यहाँ सैकड़ों की संख्या में सैलानियों के भाँति भाँति के वाहन खड़े थे। लोगों का मेला लगा हुआ हो जैसे। पहले सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर पहुँचे, कई मंदिर बने हुए हैं, परन्तु खास आकर्षण गौरीकुण्ड का था। यहाँ भी गर्म जल का कुण्ड है जिसमें अज्ञात स्त्रोत से आनेवाले जल को रोककर इकट्ठा किया जाता, एक विशेष ऊँचाई तक आने के बाद जल के निकास की व्यवस्था है। महिला पुरूष स्नान की पृथक व्यवस्था है। लगभग सभी सहयात्री साथ ही गौरीकुण्ड में स्नान के लिए पहुँचे, पक्के मार्ग के

दोनो ओर बनी दूकाने जिनमें पूजनसामग्री ठण्ड से बचाने योग्य गर्म वस्त्र, भोजन, श्रृंगार सामग्री आदि बिक रही थी। मैंने अपनी कंघी कहीं छोड़ दी थी। अतः एक कंघी खरीद ली। शर्मा जी पहले स्नान करके आ चुके थे, उन्हें सामान दिखाकर हम सभी कुण्ड में स्नान करने गये। मैंने दीदी को सम्हाल रखा था, वेदमति भाभी को उनकी समधिन धनेश्वरी ने साथ ले रख था। वे वस्त्र बदलने में असमर्थ थीं, समधिन ही उनके सारे दैनिक कार्य निबटाने में मदद कर रही थी। पहले तो जल अधिक गर्म लगा, आस'पास के ठण्डे वातावरण में कुण्ड से उड़ने वाली वाष्प स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही थी। फिर जैसे ही हमने जल में प्रवेश किया, जल की उष्णता आनंददायी हो गई। सारी थकान मिट गई। पानी सीने तक था, हम बच्चों जैसे उछलकूद मचाने लगे, छपक्–छपक् खेलने लगे। समय का ध्यान आने पर सब सुख त्यागना पड़ा। उस दिन हमें केदारनाथ का दर्शन करना था मन श्रद्धा भक्ति से भरा हुआ था। स्वच्छ वस्त्र पहन हम सभी ने अपने गीले कपड़े उस घोड़े वाले को दे दिये, जो कल रात सीतापुर से ही हमें घेरे हुए था, कि हम उसके घोड़ों पर केदारनाथ जायें। वह हमारे कपड़े होटल पहुँचा देने वाला था। हम लोग उस स्थान पर गये जहाँ एक पक्का आयताकार कुण्ड बना हुआ है। जिसके चारों ओर भित्ति चित्र बने हुए हैं, इनमें शिव, पार्वती, गणेश आदि के चित्र हैं कुछ मूर्तियाँ भी हैं। ये चित्र पत्थर काटकर उकेरे गये हैं। देखने में प्राचीन लगते हैं, पंडे बता रहे थे कि यही वह कुण्ड है जहाँ पार्वती माता स्नान कर रही थी, गणेश जी को बनाकर सजीव करने के बाद, अपने पुत्र गणेश जी को प्रहरी बनाकर। यहीं वह सारी पौराणिक घटना घटी थी जो आज भी भारतीय शल्य क्रिया का यशोगान कर रही है। (अन्दर जाने से शंकर भगवान् को रोकने पर उन्होंने बालक का सिर काट दिया था। माता पार्वती के दु:ख को देखकर छै माह से भी छोटे बच्चे को अपने पीछे करके सोती हथिनी के बच्चे का सिर काटकर बालक के सिर पर जोड़

दिया था) मन उस समय में रमने लगा था मेरा। इस कुण्ड पर अपने पितरों के तर्पण एवं पिण्डदान करने से वे स्वर्ग में अपने वंशजों को आशीर्वाद देते हैं । पंडो ने हमें बैठा दिया, 21–21 रूपये में पूजन सामग्री से सुसज्जित थालियाँ मिल रहीं थीं। हम सबने खरीद लीं। पूजा विधिपूर्वक हुई। वहाँ अपना पुरोहित चुनने का कोई अवसर नहीं मिलता, नहा करके जाओ, पकड़कर बैठा देंगे, पूजा तर्पण करने। मैंने बिना उनके कहे ही 500 रू. दक्षिणा दे दिये और लोगों ने अपनी इच्छानुसार चढ़ावा चढ़ाया, रजक जी 51 रूपयें चढ़ाने की भूल कर बैठे, पंडा जो मोटा, ताजा, गोरा–नारा अधेड़ उम्र का छोटी–छोटी दाढ़ी मूँछों वाला व्यक्ति था, हत्थे से उखड़ गया। 51 रूपये में पुरखों को तारने आये हो ? शरम नहीं आती, दो सौ इन्क्यावन से कम में नहीं चलेगा।'' हमने पराया स्थान समझकर प्रतिवाद नहीं किया। लेकिन इतना तो कह ही दिया कि ''जिसकी जितनी शक्ति उतना देता ही है, आपको अपमानित करने का क्या हक है'' ? बहुत कहा सुनी के बाद 151 रूपये में मामला निपटा।

रात में त्रिपाठी जी ने घोड़े तय कर लिये थे, वे घुड़साल में खड़े थे। यहाँ भी खच्चरों को ही घोड़ा कहा जाता है। मंदिर के पीछे से ढेरो सीढ़ियाँ उतर कर घुड़साल से होते हुए उस स्थान पर जाना पड़ता है जहाँ डोली या पिट्ठू में बैठकर जाने वालों का वजन लिया जाता है, इतना ऊँचा चढ़ना और उतरना दीदी के लिए मुश्किल था, अतः उनके लिए सौ रूपये में एक पिट्ठॅू वाले को तय कर दिया गया। हममें से कुछ लोग पैदल जाने वाले थे। इस बार वेदमति, धनेश्वरी, पटेल सर, उनके समधी, रजक जी, रजवा, वाजपेयी जी पैदल जा रहे थे। उन्हें नापतौल का चक्कर नहीं था, सो पतली वाली छड़ी खरीदी, जिसके सिरे पर लोहे की चूड़ी लगी होती है और चढ़ने लगे। मैंने घोड़े वालों का आग्रह और अपनी स्थिति देखकर सोचा भी नहीं पैदल के बारे में। दीदी का वजन ज्यादा था अतः उनके लिए चार हजार में

पालकी मिली। हमने सात–सात सौ में घोड़े लिए, शर्मा दम्पत्ति भी घोड़े पर चले गये थे आगे–आगे। दीदी को पालकी में ढंग से बैठाकर मैं और त्रिपाठी जी अपने अपने खच्चरों पर चढ़ा दिये गये। इस बार भी युवती खच्चर, कमला मुझे ले जा रही थी। एकदम चमकता काला रंग था उसका, यमुनोत्री में घोड़े वालों ने बताया था कि केदारनाथ की चढ़ाई इतनी कठिन नहीं जितनी यमुनोत्री की है। यही सोचकर शायद हमारे दल के इतने लोगों ने पैदल चढ़ने का फैसला किया। गौरीकुण्ड से रामबाड़ा 7 कि.मी. है, वहाँ से केदारनाथ 7 कि.मी. और है। यह हमारा दूसरा खच्चरारोहण था, अतः पहले इतनी घबड़ाहट नहीं थी। जी जान से घोड़े की जीन से फंसे लोहे के कड़े को पकड़कर बैठी थी मैं। मैंने बिलासपुर में ही त्रिपाठी जी से कह दिया था कि "भैया मुझे अकेली मत छोड़ना, गुम जाने पर मैं किसी को खोज नहीं पाऊँगी, मार्ग की पहचान कम कर पाती हूँ। उन्होंने मुझे आश्वस्त किया था, उसी प्रकार पालन भी किया। पूरी यात्रा में हम साथ–साथ ही रहे। इस चढ़ाई में भी हमारे घोड़े आगे पीछे चल रहे थे। हमने सुन रखा था कि ऊपर अचानक बादल बरस पड़ते हैं, बेतहाशा ठण्ड है, हम बरसाती नहीं रख पाये थे, घोड़े वालों ने अपने पास एक एक बरसाती रखा हुआ था। उन्होंने हमें आश्वस्त कर दिया कि बरसाती मिल जायेगी।

मार्ग पर्वत को काट–काटकर बनाया गया है, जिस पर चढ़ते हुए लोग चींटियों की लाइन के समान नजर आते हैं। गर्दन पीछे जाने पर पर्वत की ऊँचाई ही ऊँचाई नजर आ रही थी, रास्ते के एक ओर पर्वत और एक ओर हजारों फीट गहरी खाईयाँ है, नीचे नजर डालने पर दिल की धड़कने थमने लगती थीं। दूर से देखने पर ऊँचे पर्वतों से निकलकर मंदाकिनी नदी में मिलने वाले झरने सूर्य की रोशनी में दूध की धार के समान लगते थे। कमली को चलाने वाले का नाम संतोष था। मैंने उससे बातें करके अपनापन स्थापित करने की कोशिश

की। वह भी गढ़वाली था, संयोग से मेरे बड़े पुत्र का नाम संतोष है, सबसे अधिक प्रिय, किन्तु सदा छत्तीस रहने वाला। मेरे मुँह से निकल गया "यहाँ भी संतोष से पाला पड़ गया है।"

वह एक सच्चे दिल का, कड़वा बोलने वाला आदमी था। मैंने उससे उसके घर परिवार के बारे में पूछा था, गढ़वाली जीवन शैली के बारे में बातचीत की। उसने बताया हमारे यहाँ लड़का होने पर खुशी मनाई जाती है। मुख्य धंधा सैलानियों की सेवा करना, घोड़े हाँकना, खेती करना, पशु पालना है। हम लोग 6 माह यहाँ रहकर जाड़े में अपने घर चले जाते हैं। अपने छत्तीसगढ़ में मदिरापान का बहुत चलन है, मैं इस बारे में जानना चाहती थी किन्तु संकोचवश पूछ नहीं पाई, मेरी बुरी आदत है दुकानों के बोर्ड पढ़ने की। अपने प्रदेश में जहाँ मेरी नजर ठहरी देशी शराब की दुकान या अंग्रेजी शराब की दुकान लिखा होता है। कहीं–कही तो दस दस कदम पर इस प्रकार के बोर्ड लगे हैं, जहाँ आठो काल बारह माह सभी उम्र के लोगों की भीड़ नजर आती है। मैं अपने को धिक्कारती हूँ "ये क्या देख लिया' ? लेकिन अगले कदम फिर वहीं दृश्य। किन्तु यहाँ की अब तक की यात्रा में मुझे न तो कोई मद्यप मिला न मदिरालय, न ही माँस की कोई दुकान दिखी। आदतन मेरी निगाहें ढूंढ़ती थी इन वस्तुओं के हाट को। जब भी खच्चरी कूद--कूदकर पहाड़ चढ़ती पूरा वजूद हिल जाता, वह लगातार चढ़ रही थी, चढ़ती फिर उतरती खट् खट् अपना अयाल झूलाती, चढ़ते समय उसके सिर की ओर भार देकर मैं झुक जाती, उतरते समय पूँछ की ओर भार देकर झुक जाती। ठण्ड बहुत थी, वहाँ के लोग मोटे गरम कपड़े पहने कान बाँधे लगातार अपना काम करते नजर आये। इन्हीं खच्चरों की सहायता से ऊपर जरूरत का हर सामान पहुँचाया जा रहा था। थोड़ी–थोड़ी दूर पर पेयजल की सुविधा थी बीच–बीच में होटल भी हैं, जो तिरपाल बाँधकर बनाये गये हैं, चाय कॉफी या नाश्ता बहुत महँगा है। सब्जियों में आलू, मटर ही

प्रधान है। अपने यहाँ जैसे सब्जियों से भरा बाजार अभी तक देखने को नही मिला।

यहाँ भी पहाड़ों को काटकर संकरा मार्ग बनाया गया है। खाई की ओर तार की बाड़ लगाई गई है घोड़ों की आदत बाड़ के किनारे–किनारे चलने की है। कभी कभी तो उनके खुर का कुछ भाग, सड़क के बाहर भी रहता है। किन्तु वाह रे, घोड़े का अनुशासन। अपने रास्ते पर ही चलते हैं, उनके गोबर, मूत्र त्याग का स्थान निश्चित है, पहाड़ के किनारे जब वे घुसते तो जान निकलने लगती डर से। क्योंकि पहाड़ से सिर टकराने का भय था। शरीर के अन्य अंग छिल–घिस रहे थे। संतोष भी सतर्क करता रहता था। "सिर बचाना माई, देखकर झुका लेना। त्रिपाठी जी छै फीट से भी ज्यादा लम्बे हैं, अतः उन्हें अधिक खतरा था। "बाबूजी सिर बचाना, वे झुककर बचते, वैसे जहाँ अधिक खतरा था वहाँ लालपेन्ट पोत दिया गया था, ताकि यात्रियों की दृष्टि वहाँ पड़े और वे अपनी सुरक्षा कर सकें। गौरीकुण्ड से 7 कि.मी. दूर रामबाड़ा है, यह घोड़ों के रूकने का स्टेशन है यहाँ आकर किनारे–किनारे घोड़े अपने आप रूक जाते हैं, यहाँ कई दुकाने हैं, देखने में झोपड़ीनुमा हैं, घोड़े वालों की दुकाने बँधी हैं। अपने अपने होटल में रूकते हैं, यहाँ नाश्ता, चाय, काफी आदि मिलता है, संतोष ने एक दुकान में हमें बैठाया, यहाँ स्टोव्ह पर चाय बन रही थी और भट्ठी भी दहक रही थी। कई लोग अपना शरीर गरम कर रहे थे। संतोष ने एक प्लास्टिक के तसलें में दो ढ़ाई किलो गुड़ ले जाकर दोनों घोड़ों को खिलाया। यहाँ घोड़ों के पानी पीने के लिए कई टंकियाँ बनी हैं, पहाड़ से आनेवाला स्वच्छ जल मोटे पाइप के माध्यम से उनमें भरा जाता है, खाली जगह देख देखकर घोड़े पानी पीते हैं गुड़ खाकर। संतोष ने अपने लिए आलू का पराठा मँगा लिया। दीदी की पालकी अभी बहुत पीछे थी। रूककर इंतजार करना चाहते थे। त्रिपाठी जी ने नाश्ते के लिये चार रोटियाँ मँगवा ली। आलू मटर की

पनियर सब्जी थी। हमने दो –दो रोटियाँ खाकर गुनगुना पानी पिया, होटल वाले से माँगकर। लंबे उपवास के कारण थोड़ी दुर्बलता का अनुभव कर रही थी, परन्तु केदारनाथ जी के दर्शन की लगन के आगे कुछ भी याद नहीं रहता था। हमने एक कप कॉफी मंगवाई और दोनों ने आधा आधा पी लिया। अच्छा महसूस हुआ। होटल के पीछे हजारों फुट गहरी खाई है, यही मंदाकिनी का पथ है, यहाँ दो छोटी–छोटी नदियाँ ऊपर से आकर मंदाकिनी में मिल जाती हैं रास्ते में नगरनिगम का प्रसाधन बना हुआ है जिसका प्रयोग सशुल्क है। सड़क साफ और दुर्गन्ध रहित हैं। लगता नहीं कि इस रास्ते पर हजारो पशु दिन रात चढ़ उतर रहे हैं।

संतोष ने विश्राम के पश्चात् फिर से हमें घोड़ों पर बैठा लिया, दीदी की पालकी अभी भी पीछे थी।

"बाबूजी, वे ऊपर ही मिलेंगे चिन्ता मत करो", उसने हमें घोड़े पर चढ़ाया और दोनों घोड़ों को नियंत्रित करता स्वर्ग की सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। हम लोग जय केदारनाथ, जय केदार बोलते जा रहे थे, जो लोग पैदल आ रहे थे वे पीछे छूट चुके थे, वे थके–थके और विवर्णानन दर्शन की धुन में छड़ी के सहारे बढ़ते जा रहे थे। जो लोग रात्रि में ऊपर रुके थे, वे अब उतर रहे थे। बड़ी चतुराई से घोड़े एक दूसरे को रास्ता देते थे मन में आया "हमें भीड़ में चलना इन जानवरों से सीखना चाहिये। ज्यों–ज्यों हम ऊपर चढ़ते जा रहे थे, ठण्ड बढ़ती जा रही थी, कभी बादल ढ़क लेते सूर्य को और कभी छितरा जाते पहाड़ की सुरम्य घाटी में। घोड़े वाले ने बताया था कि यहाँ पानी का कोई ठिकाना, नहीं कब गिरने लगे। हम चिन्ता में थे कि हमारे पास रेनकोट नहीं है। संतोष ने घोड़े की जीन के नीचे से दो बरसातियाँ निकालकर दीं। साधारण पोलीथिन को बीच से काट दिया गया था, यह सिर घुसाने के लिए था। दोनों ओर सिला हुआ। 50 रू. का मिला था, हमने उसे अपने अपने कपड़ों के ऊपर डाल लिया। त्रिपाठी जी

को अभी भी ठण्ड नहीं लग रही थी, वे साधारण कपड़ों में ही थे। रामबाड़ा से 7 कि.मी. ऊपर चढ़ने पर देवदखनी नामक स्थान मिला। यहाँ से मंदिर नजर आने लगा था। हमने हाथ जोड़कर दूर से ही प्रणाम किया। निरंतर कमली हमें आगे बढ़ाती रही। घोड़ों के रुकने का नियत स्थान था, जो रास्ते से ऊँचाई पर बना था। यह एकछत वाला बड़ा सा हॉल था, जो देख–रेख के अभाव में गंदा और खण्डहर जैसा दिखाई दे रहा था। संतोष ने हमें उतार दिया। पंडे यजमानों की तलाश में घूम रहे थे। एक नाटे कद के गौर वर्ण के पंडा जी ने में हमें घेर लिया – ''कहाँ के हो, कहाँ के हो'' ? ''बिलासपुर छत्तीसगढ़'' – हमने उत्तर दिया। ''हाँ आप हमारे यजमान हैं, आईये हमारे साथ''। मन्द मुस्कान के साथ वे हमें लेकर बढ़ गये। संतोष पीछे पीछे आया और अपना फरमान सुना दिया – ''तीन बजे के बाद यहाँ घोड़े रुकते ही नहीं, ठण्ड बढ़ जाती है वे जो नीचे की ओर दौड़ते हैं तो रामबाड़ा जाकर ही रुकते हैं हम तो चले जायेंगे भाई। आप यदि तीन बजे यहीं न मिले। हम उसके फरमान सुनकर जरा विचलित हुए, उस समय एक बज चुका था। हमें अपने साथियों की प्रतीक्षा भी करनी थी, इधर पंडा खींचे जा रहा था, जल्दी चलो यजमान ढ़ाई बजे मंदिर के कपाट एक घंटे के लिये बन्द हो जाते हैं, फिर आप को यहाँ रुकना पड़ जायेगा। कोई चिन्ता नहीं है, सब इंतजाम हो जायेगा।'' तेज गति से पंडा आगे बढ़ रहा था। यहाँ 11785 फुट की ऊँचाई पर समतल स्थान है जहाँ पर मार्ग के दोनों ओर जीवनोपयोगी वस्तुओं की छोटी छोटी दुकानें लगी हुई हैं। क्रमशः चढ़ते हुए हम मंदिर तक पहुँच गये, यहाँ रास्ते के दोनों ओर पूजन सामग्री, रत्न, नग, पत्थर आदि, चारो धाम की फोटो, सिन्दूर, टिकली, प्रसाद आदि की दुकाने सजीं हुई रहती हैं, पंडा के कहने पर हम आगे बढ़ रहे थे कि पालकी वाले मंदिर के सामने तक आते हैं। रास्तें में बादल नीचे तक उतर आये और बर्फ जैसी ठंडी मोटी–मोटी बून्दें गिरने लगीं। हमने संतोष की दी हुई

रेनकोट पहन ली, लेकिन ठण्ड से हाथ पाँव अकड़ने लगे। जबकि मैंने, इनर के ऊपर कर्डिगन पहन रखा था। एक दुकान वाले ने हमें पुकारा, पंडा जी ने वहीं हमें जूते इत्यादि रख देने को कहा। अतिरिक्त सामान लेकर जाने से कोई लाभ नहीं था। हमने यहीं से प्रसाद खरीदा, जो खंड वाली थालियों में सजा था, वहाँ शंकर जी को घी लगाने की परम्परा है। कहते हैं, पाँडव जब गुरू हत्या एवं गोत्र हत्या के पाप के प्रायश्चित के लिये यहाँ आये थे, उन्हें देखकर शंकर जी भागने लगे, क्योंकि उनका पाप धोना उनके लिए भी बहुत कठिन था। तब पाँडवों ने प्रार्थना की – "हे प्रभु ! हम आपकी शरण में आये हैं। हमें पाप मुक्त कर दीजिए। उनकी प्रार्थना सुनकर शंकर भगवान् ने भैंसे का रूपधारण कर लिया और भैंसे के ही पृष्ठ भाग के रूप में यहाँ स्थापित हो गये। पाँडवों के पाप को अपने ऊपर लेने के कारण उनके शरीर में जलन होने लगी। जिसे शांत करने के लिये पाँडवों ने उनके विग्रह पर घृतलेपन किया। तभी से यहाँ भक्त गाय का शुद्ध घी अपने हाथों से विग्रह पर चुपड़ते हैं। हमारी थाली में भी पुष्प, सिन्दूर, चन्दन, अगरबत्ती, प्रसाद, घी आदि सभी कुछ था, समय की माँग को देखते हुए जो गर्म कपड़े थे उन्हें ही बाँटकर हम दोनों ने ठण्ड से अपनी रक्षा की।

"आप लोग दर्शन कर लीजिए, नहीं तो आप भी रह जायेंगे"। पंडा व्याकुल था।

"और लोग पीछे हैं" त्रिपाठी जी बोले।

"वे आयेंगे तो हम उन्हें ले जाकर दर्शन करा लायेंगे। आप चलिए तो"। वे आगे बढ़ गये। हम भी यंत्रचालित से उनके पीछे, मंदिर की ऊँची सीढ़ियाँ चढ़ने लगे। सीढ़ियों के दोनों ओर दरिद्रनारायण पंक्तिबद्ध बैठे, पुकार रहे थे, बाबूजी, भोजन के लिये देते जाओ, तुम्हारे बच्चे बने रहें। बाबूजी धरम करते जाओ"। हमें अभी अवकाश कहाँ था कि हम उधर ध्यान दें ? सीढ़ियाँ चढ़कर हमने उस प्राचीनतम् दिव्य मंदिर के दर्शन किये, जिसे द्वापर युग में पाँडवों ने बनवाया था।

यह शंकर जी के द्वादश ज्योर्तिलिंगों में से एक हैं। केदारनाथ जी के दर्शन के पश्चात् ही बद्रीनाथ की यात्रा पर जाया जाता है। अन्दर प्रवेश करने के लिए हम लंबी लाइन में लगे, साथ साथ मैंने मंदिर को नयन भरकर देखा। बड़ी छोटी चाँदी की लटकती घंटियाँ बीच–बीच में बज उठतीं। कोलाहल भी हो रहा था, पाँच मिनट में फोटो बनाने वाले हर आदमी से पूछ रहे थे। हमने भी दो फोटो बनाने को कह दिया। वहाँ हम पूर्णरूपेण असांसारिक हो गये थे। मुझे घर द्वार, रिश्ते नाते, पद प्रतिष्ठा की सुध नहीं थी तो दूसरों की बात क्या कहूँ। मुझे तो प्रभु के दर्शन की तीव्र लालसा भीड़ के साथ उनके करीब पहुँचाती जा रही थी। बरामदे में एक पीतल के नंदी बने हुए है, कह रहे थे पंडा कि ये मनोकामना पूर्ति करते हैं। इसके बाद जगमोहन में (बाहरी प्रासाद में) पार्वती, पांड़व, लक्ष्मी आदि की मूर्तियाँ हैं। यह मंदिर केदारनाथ पुरी के उत्तरी भाग में स्थित है। काले पत्थरों से बना मंदिर पत्थर को काट–काटकर आयताकार बनाकर न जाने किस पदार्थ से जोड़ा गया है। जो आज तक जैसे का तैसा है। मंदिर के नजदीक ही हंसकुण्ड है सुना है यहाँ ब्रम्हाजी ने हंस के रूप में रेत का पान किया था। यहाँ पितरों की मुक्ति हेतु, श्राद्ध, पिण्डदान, तर्पण आदि किया जाता है। फिलहाल अभी तो हमारी नजर केदारनाथ जी के भव्य विग्रह के दर्शन के लिये अधीर थी। पंडा ने लाइन आने पर हमें अन्दर घुसाया। भीड़ बहुत थी, एक हेलोजन बल्ब जल रहा था जिसके कारण गर्भगृह में उजाला फैला था। मंदिर की दीवारों पर भी गौखों में मूर्तियाँ बैठी हैं, लाइन से जाते हुए दर्शनार्थी उनकी पूजा करते प्रणाम करते आगे बढ़ रहे थे। हम सभी अब गोलाकार हो गये थे क्योंकि बीच में केदारनाथेश्वर ज्योर्तिलिंग विराज रहे थे। उन्हें देखते ही मैं भावविभार हो उठी। "मैं आ गई, पिता, आपके दर्शन करने, आपसे मिलने, घरबार सब कुछ छोड़कर, इतने नदी, पहाड़ पारकर आ गई पिता, मुझे गले से लगा लो, अपनी नन्ही पुत्री की अंगुली थाम लो पिता। आज मेरी

आँखें धन्य हुई पिता, "मेरी आँखों से अश्रु बह निकले।

उनका भौतिक कलेवर महिष के पृष्ठ भाग सदृश है, चारों ओर अलग अलग आकृतियाँ हैं, जो ध्यान से देखने पर स्पष्ट हो जातीं हैं, पार्वती, गणेश जी, कार्तिकेय जी की। पहले बैठे लोग जैसे ही पूजा करके उठे, हम उसी आसन पर बैठ गये। पंडा हमें पति–पत्नी समझकर एक साथ बैठा रहा था मुझे स्थिति का भान हुआ, अटपटा भी लगा – "हम पति पत्नी नहीं हैं, 'आपकी' पत्नी पीछे आ रही हैं, मैं सहयात्री हूँ" मेरी बात सुनकर पंडा ने हमारे बीच जरा सा अन्तराल बना दिया। यूँ तो भीड़ ठसाठस थी, सभी एक दूसरे से जुड़े हुए थे, मन के भाव ही थे जो अन्तराल पैदा कर सकते थे। त्रिपाठी जी ने अपनी पत्नी के लिए कंधे पर अंगोछा रखा और मैंने अपने पति का ध्यानकर उन्हें अपने साथ लिया। हमने विधिपूर्वक पूजन किया। घृतविलेपन करते हुए साक्षात् शिव स्पर्श का अनुभव प्राप्त किया। पूजा कर हम लोग जगमोहन में आये, वहाँ मनोकामना सिद्ध करने वाले नंदी थे, सब लोग मनोकामना धागा बाँध रहे थें, मैंने सोचकर देखा क्या कमी है जीवन में" ? "सब कुछ तो दिया है पिता ने, कोई कामना नहीं, एक कामना है, जिसे भगवान् के आगे व्यक्त करने में भी मुझे संकोच हो रहा था, वह असंभव जैसी माँग थी, हाँ भगवान् से छोटी–मोटी वस्तु क्या माँगना"? "पिता मैं अपने युग की तुलसी बनना चाहती हूँ, मेरी लेखनी में वह ऊर्जा भर दो कि मैं जग के कल्याण हेतु कुछ लिख सकूँ। माँगकर मैं स्वयं शरमा गई क्योंकि मैं जानती हूँ कि किसी को तुलसी के समान बनाना प्रभु के लिए भी मुश्किल है। एक प्रकार से मेरी प्रार्थना घृष्टतापूर्ण भी थी, फिर मुझे या तो क्षमा करें या मेरी कामना पूर्ण करें। क्योंकि जब भी कोई संसार की भलाई के लिए कुछ माँगता है, भोले भण्डारी सोच विचार में न पड़ दे ही देते हैं। दरिद्र नारायण की यथा संभव पूजा करते हम लोग मंदिर की सीढ़ियाँ उतरकर नीचे आये। जहाँ सामान रखा था वहाँ पहुँचते ही हमने देखा

कि दीदी की पालकी आ पहुँची। केदारनाथ जी की महान् कृपा समझ कर मन श्रद्धा से भर उठा। हम लोग दीदी को लेकर दुबारा लाइन में खड़े हुए। लाईन में मैं उनके बदले खड़ी हुई, क्योंकि वे बहुत थकी हुईं थीं, दर्शन की लगन ही उन्हें चला रही थी। त्रिपाठी जी ने सहारा देकर उन्हें सीढ़ियाँ चढ़ाई। इस बार मैं दुकान से कैमरा लेती आई थी, मंदिर के अन्दर फोटोग्राफी वर्जित थी, बाहर बाहर की फोटो भी नहीं खींच पाई थी। अतः इस बार अपनी इस इच्छा को भी पूर्ण करने का अवसर प्राप्त हुआ, तो इत्तमीनान से चारों ओर नजरें घुमाई। आकाश बहुत पास नजर आ रहा था, बिल्कुल मंदिर के शिखर को छूता हुआ। दक्षिण की ओर दृष्टिपात किया तो वह छोटी सी पहाड़ी दिखाई दी जिसके मध्य भाग में मुकुन्द भैरव के मंदिर का कृष्ण ध्वज लहरा रहा था। यहाँ से हिमालय का सुन्दर दृश्य एकदम पास से देखा जा सकता है। उसी पहाड़ी से एक बर्फानी झील से पवित्र सलिला मंदाकिनी का उद्‌गम हुआ है। पास से जाकर देखना चाहती थी, किन्तु यह संभव नहीं हो सका, क्योंकि हमें दिन रहते गौरीकुण्ड पहुँचना था। अन्सारी ने दो टुक घोषणा की थी हमारे चलते समय, – "मैं आपलोगों को यहीं मिलूँगा। लेकिन छै बजे के पहले। उसके बाद मैं सीतापुर चला जाऊँगा क्योंकि रात में बेरियर बन्द रहता है। पुलिस वाले जाने नहीं देते। पकड़कर पैसे वसूलते हैं, पीटते भी हैं ड्राईवर को"। उसने अपनी बात कहीं किन्तु हमारी कुछ भी नहीं सुनी। दुकान आकर हमने प्रसाद के पैसे दिये। घर के लिये कुछ प्रसाद आदि खरीदे। वहाँ से निकले ही थे कि हमें ठाकुरराम पटेल और उनकी पत्नी वेदमती आते दिखाई दिये, उनके साथ रजक जी भी थे, 14 कि.मी. की चढ़ाई के कारण उनहीं हालत चिन्ताजनक दिखाई दी। चेहरा धुँआ धुँआ हो रहा था, एक तो बीते दिन दोनों ने एकादशी का व्रत रखा था, पारण के बिना ही इतनी ऊँची चढ़ाई चढ़ आये थे। सबसे अधिक आश्चर्य तो वेदमती के साहस पर हो रहा था। घर की छत से पाइप उठाते समय

पाइप विद्युत लाईन से टकरा गया था जिसके कारण वे विद्युताघात की शिकार हो गईं थी। उनके दोनों पंजे काट देने पड़े थे। शरीर का पूरा रक्त सूख गया था, किसी प्रकार जीवन बचाया जा सका था। अभी उस घटना को मुश्किल से पाँच वर्ष ही बीते हैं। वे नाटे कद की दुबली पतली महिला है किन्तु आत्मविश्वास कितना है यह तो दिखाई ही दे रहा था। **(रंगीन चित्र 11– केदारनाथ जी का दृश्य)**

उस समय मंदिर का कपाट बंद होने में मुश्किल से आधा घंटा शेष था।

"पहले दर्शन कर आइये पटेल जी"। हमने उनका हालचाल पूछे बिना ही लाइन में लगा दिया। प्रसाद बाद में पहुँचा उनके पास– "अब की बार घोड़े से उतरियेगा। हालत ठीक नहीं है आपकी? मैंने कहा था। उनके समधी, समधिन, वाजपेयी जी वे सब पैदल चले थे किन्तु आधे रास्ते से घोड़े से आ रहे थे, वे भी पहुँच गये।

आप लोग हमारे लिए घोड़ा तय करके रखियेगा पटेल जी ने कहा था। वेदमती चूँकि घोड़े की जीन में बँधा लोहा पकड़ नहीं सकती थीं इसलिये उनके लिए पालकी लेनी थीं।

भूख न लगने पर भी हम लोग एक होटल में बैठे। थोड़ा जलपान करने के लिए। जलपान आने तक के समय में त्रिपाठी जी ने फोन कर अपने घर केदारनाथ जी के दर्शन की सूचना दी। मेरा मोबाइल बन्द था, मैं भी अपने घर फोन करना चाहती थी, अतः उन्हीं से मोबाइल लेकर अपने घर फोन कर अपने पति को प्रणाम किया तथा अपनी कुशलता की सूचना दी। पंडा महाराज मोटी दक्षिणा की चाह में पड़े थे, हमसे कहा कि आप लोगों के लिए धर्मशाला बनवा रहे हैं अंशदान देते जाइये हम आपके बिलासपुर में रहते हैं। हमने यथाशक्ति उन्हें दक्षिणा दिया। अंशदान देने का औचित्य हमें समझमें नहीं आया, अतः बिलासपुर आने पर देने की बात कहकर पिण्ड छुड़ाया। वे भी घुटे दलाल थे तुरन्त चाहते थे, थोड़ी कड़ाई करने पर माने।

उस समय तक तीन बज चुके थे। पालकी वाले घुड़साल की ओर चले गये थे। अतः देवकी दीदी को भी कुछ दूर पैदल चलना पड़ा।" घुड़साल से थोड़ा पहले ही एक झोपड़ीनुमा चाय की दुकान में मिट्‌टी के गोल भट्‌टे में आग जल रही थी। कुछ घोड़े वाले, कुछ चाय पीने वाले गोल बनाकर बैठ आग तापते हुए परमानंद में मग्न थे। वहीं संतोष भी था, दीदी को लानेवाले कहार भी थे। उन्हें सम्हालकर डोली में बैठा दिया गया। रेनकोट उन्हीं के पास थी, उससे अच्छी प्रकार ढाँक कर पालकी रवाना कर दी गई। साथियों के लिए घोड़े और पालकी मिल गई, जिन्हें हमनें यहीं रूकने को कह दिया। किराया भी तय हो गया।

संतोष बहुत कचर–कचर कर रहा था। देर से आये हो, मैंने तीन बजे कहा था चार बजा दिये, अंधेरे में खतरनाक रास्ता कैसे पार होगा, जानवर भटक जायेंगे।

"अरे भाई, कहीं एक मिनट भी नहीं रूके हैं हम लोग। अभी बजा ही कितना है ? ले देकर सवा तीन हमने तर्क दिया। उसने हमें घोड़े पर ठीक से बैठाया और चल पड़े गौरीकुण्ड की ओर।

चढ़ाई से अधिक उतराई कष्टदायक थी, सीढ़ियाँ काफी ऊँची–ऊँचीं थीं, कमली जब ऊपर से नीचली सीढ़ी पर कूदती और बिना टिके ही अगली सीढ़ी पर कूद जाती उस समय पूरा शरीर हिल जाता, लगता अब गिरे तब गिरे। अपना वजन पीछे तरफ खींचे दोनों हाथ से जीन में फँसे कड़े पकड़े और जिन से लटके पैरदान में जूता फँसाये हम उतर रहे थे।

एक जगह त्रिपाठी जी का सिर टकराते टकराते बचा, थोड़ा छिल भी गया था। अब सब घोड़े जल्दी मचा रहे थे नीचे जाने की। संकरे मार्ग में पैदल चलने वालों के लिए कोई जगह नहीं थी। घोड़े भी आपस में टकराने को हो रहे थे, टकराकर भी गिरने से बच रहे थे। साईस यात्रियों को सचेत कर रहे थे, "सम्हलकर बैठे रहना भाई,

सम्हलकर बैठे रहना बाबू जी"। हम लोग थोड़ा धीरे चलाने की प्रार्थना कर रहे थे। "भैया, जरा धीरे चलो, हमें डर लग रहा है"। मैंने संतोष से कहा।

"माई हमारे रोकने से भी घोड़े रुकने वाले नहीं हैं। ठण्ड से भागते हैं ये। रामबाड़ा जाकर ही दम लेंगे"। एक बार तो मुझे लगा कि मेरा अन्तिम समय आ गया है, मन में तरह तरह के विचार आने लगे, अपना घर परिवार याद आने लगा। यदि मुझे यहाँ सद्गति मिल गई तो घर वाले क्या कहेंगे। "मेरे पति कहेंगे इतना मना किया मानी नहीं, पटेल के चक्कर में पड़कर जान गवां दी। "ऐसा ही फल मिलना चाहिये ऐसी औरत को जो मनमानी चाल चले", अच्छा हुआ डोकरी से पिण्ड छूटा"। बहूएँ कहेंगी" शायद।

मेरा खजाना बेटा किस प्रकार दौड़ा आयेगा उतनी दूर से कैसे मुझे खोजेगा ? मैं तो हजारों फुट नीचे खाई में गिरकर चूर चूर हो चुकी होऊँगी, "मेरी माँ कहाँ गई, मेरा छोटा बेटा रोयेगा"। इन्हीं खयालों में खोई मैं बहुत घबड़ाहट का अनुभव करने लगी।

"भैया, भगवान् के लिए थोड़ा घोड़ा रोक दो" मैंने संतोष से विनय की।

"उतार नहीं सकता घोड़े से" कहते कहते उसने कुछ पल के लिए घोड़ा रोक दिया।

अभी साँस स्वाभाविक भी न हो पाई थी कि कमला चल पड़ी। हड़बड़ी में मेरा पैर पैरदान से हट गया। घोड़ी तेज गति से उतर रही थी। एक दूसरे घोड़े से टकरायी, जिससे मेरे पैर में रगड़ लगी। "हाय मेरा पैर गया मैं चीख पडी, संतोष मेरी चिल्लाहट को कोई महत्व नहीं दे रहा था, उसने पैर पकड़कर पैरदान के गोले में फंसा दिया। "अभी नहीं लगा है माई, जब तू गिरेगी न तब लगेगा", संतोष कह रहा था। उसकी कड़वी बात में छिपे, मृदुल भाव को ताड़कर मैंने उसे हँसी में उड़ा दिया। उस विपरीत परिस्थिति में भी मन में कहीं गुदगुदी लगी

हो जैसे।

शाम घिरी आ रही थी। संतोष ने कहा था कि डोली वाले हमसे एक घंटे पहले पहुँचते हैं अतः हम निश्चिंत थे कि दीदी हमसे पहले ही गौरीकुण्ड पहुँच जायेंगी, पालकी वालों को नापतौल वाली जगह पर जाकर रुकने को कह दिया गया था। यहाँ हर कदम आसन्न मृत्यु को देखकर शास्त्रों की बातों का रहस्य समझ में आया – "ब्यास स्मृति, चौथा अध्याय, महाभारत शल्य पर्व, 38 वाँ अध्याय, लिंग पुराण 92 वाँ अध्याय, बामन पुराण पर्व 83 वाँ अध्याय, पद्म पुराण 36 वाँ अध्याय, गुरूड़ पुराण 81 वाँ अध्याय, कूर्म पुराण 81 वाँ अध्याय और सौर पुराण 69 वाँ अध्याय, ब्रम्हवैवर्त पुराण, शिव पुराण, स्कन्द पुराण आदि एक स्वर में क्यों कहते हैं – "केदार क्षेत्र में मृत्यु से मनुष्य सभी प्रकार के पापों से मुक्त हो जाते हैं। उन्हें मोक्ष प्राप्त होता है, वे शिवलोक के वासी हो जाते हैं। केदारनाथ में, स्नान, दान एवं दर्शन भजन से अक्षयपुण्य प्राप्त होता है। जब ऐसी बात है तो नश्वर शरीर के बारे में क्यों कर ज्यादा सोचना, अभी अभी हम जिस पुण्य कर्म को कर चुके थे उसी के बारे में क्यों न सोचूँ" ? मैंने मन के अश्व की वलगा खींचकर उसे मृत्यु भय से हटाकर शिव चरणों में लगाने का प्रयास किया।

महाभारत युद्ध के पश्चात् युधिष्ठिर आदि पाण्डव गोत्र वध एवं ब्राम्हण वध के पाप से छूटने के उपाय व्यास जी से पूछते हैं तब वे उन्हें केदारनाथ के दर्शन का एक मात्र मार्ग बताते हैं।

सतयुग मे एक केदार नाम के राजा हुए, वे सप्तदीपों के अधिपति थे, वृद्धावस्था में पुत्र को राज्य दे उन्होंने वन में जाकर तप किया, जहाँ उन्होंने तप किया वह पूरा क्षेत्र केदार क्षेत्र कहलाया। उनकी पुत्री वृन्दा ने अविवाहित रहकर जिस स्थान पर तप किया वह वृन्दावन कहलाया। वृन्दा वास्तव में लक्ष्मी का रूप थी।

अब तक अंधेरा हो चला था ज्यों–ज्यों हम गौरीकुण्ड की तरफ

बढ़ रहे थे ठण्ड कम होती जा रही थी, अंधेरे में इन मार्गों पर चलना वाकई खतरनाक साबित हो सकता था।

गौरीकुण्ड पहुंचकर अपने अस्थिपंजर सहलाते हम लोग उस स्थान पर पहुँचे जहाँ सुबह तौल मशीन थी पालकी पर जाने वालों का वजन लिया गया था।

अभी सात भी नहीं बजे थे, तो भी चारों ओर घुप्प अंधेरा और सन्नाटा पसरा हुआ था। वहाँ कोई डोली नहीं पहुँची थी अब तक। हमें चिन्ता होने लगी, आखिर कहाँ रूक गई पालकी" ? मुझे वहाँ बैठाकर त्रिपाठी जी, पिट्ठूवालों को खोजने चले गये, यहाँ ऐसा भी तो कोई नहीं था, जिससे कुछ पूछा जा सके। अज्ञात भय से दिल धड़क रहा था, जब तक पिट्ठू वाले के साथ त्रिपाठी जी आये डोली वाले दीदी को पकड़कर ले आये, बताने लगे, पालकी टूट गई थी, किसी प्रकार सम्हालकर घोड़े से लाये हैं यहाँ तक। ईश्वर की कृपा से उन्हें चोट नहीं लगी थी, उन्होंने बताया कि पालकी वालों ने उन्हें डराकर घोड़े पर चढ़ाया "चढ़ो या यहाँ जंगल में अकेली रहो, हम तो नहीं रुक सकते।" लाते समय दो साईस दोनों तरफ से सम्हालकर लाये हैं"। हिसाब कर उनकी मजदूरी दी गई।

पिट्ठू पर दीदी को बैठाकर हम पहले गौरीकुण्ड के लिए सैकड़ों सीढ़ियाँ चढ़ें, फिर उतनी ही उतरें। गौरी कुण्ड की आखिरी सीढ़ी पर बैठकर हम चिन्ता करने लगे कि अन्सारी तो चला गया होगा।सामान हमारा सीतापुर में है, अब इस अंधेरी ठण्डी रात में हम कहाँ और कैसे रहेंगे, कि इतने में सदा की भाँति मुस्कुराता, हँसता जेब में हाथ डाले अंसारी आकर खड़ा हो गया। उसे देखकर जान में जान आई। हमारे साथी शर्मा दम्पति, वाजपेयी जी आदि पहले से ही गाड़ी में बैठकर हमारा इन्तजार कर रहे थे किन्तु पटेल जी का परिवार, रजवा आदि अभी नहीं पहुँचे थे। अतः हम लोग आराम से सीढ़ी पर बैठे थे कि मेरा हाथ अपने कान की ओर गया "हाय दीदी मेरा टाप्स"

उसका पेच मेरे हाथ में था, सोने का हीरा जड़ा टाप्स मैं पहनकर आना नहीं चाहती थी किन्तु खजाना ने कह दिया कि ''इसे पहने जाओ माँ'' सो मैं आ गई थी। उसके गुमने की आशंका से विचलित मैं इधर–उधर देख रही थी, (उस तरफ बिजली का प्रकाश था) कि मेरी नजर सीढ़ी के नीचे पड़े टाप्स पर पड़ गई। रोशनी के कारण उसका हीरा चमक रहा था। उठाकर मैंने अच्छी प्रकार पेंच कसकर उसे पहन लिया। चाय–काफी पी रहे थे कि बाकी लोग भी आ पहुँचे। अपनी बस में बैठकर हम लोग सीतापुर की ओर चले, रास्ते में बेरियर पर रोक दिये गये। दीदी को सुला दिया था हमने सीट पर, उनकी हालत ठीक नहीं थी, हम भी वैसे ही थे किन्तु उनसे अच्छे थे। उन्हीं का वास्ता देने पर देखने के बाद कुछ रुपये देकर हम वहाँ से अपने होटल जा सके। **(रंगीन चित्र 12– मन्दिर त्रियुगीनारायण)**

सभी ने सरसों का तेल, फास्ट रिलीफ एवं वेटाडीन लगाकर आराम किया। पटेल जी की बेबसी मेरा हृदय चीर गई। होटल पहुँचने के बाद वे मेरे कमरे में आये। सरसों तेल की शीशी मेरे पास थी ''जांव व मैडम सेंक चुपर दौ, बपरी गजब मेहनत करे हे, हाथ रइतिस त वो ह हमर करतिस''। मैंने उन्हें तेल की शीशी दे दी, उनका दुःख अपने अन्तर में अनुभव किया, और सच्चे जीवन साथी के रूप में मन ही मन उनकी प्रशंसा की। जैसा बन पड़ा दीदी की सेवा की गई। उन्हें दर्द निवारक गोली देनी पड़ी। **(रंगीन चित्र 13–पहाड़ी सेवन्ती पुल के साथ लेखिका)**

(9)

दिनांक 9–10–2011, रविवार को प्रातः पाँच बजे ही उठकर मैंने डेरा समेटा, स्नान के लिए होटल से ही दो बाल्टी गरम पानी मंगवाया गया, जिससे हम दोनों बहनों ने संक्षिप्त स्नान किया। त्रिपाठी जी ठण्डे पानी से ही नहाते हैं। सो उन्हें कोई समस्या न हुई। उन्होंने होटल का हिसाब चुकाया, आज बद्रीनाथ के लिए प्रस्थान

करने से पूर्व हम त्रियुगी नारायण मंदिर जानेवाले थे क्योंकि हम लोग त्रियुगी नारायण में रुक नहीं पाये थे। आज फिर मन बना वहाँ जाने का। यहाँ माता पार्वती का विवाह शिवजी के साथ सम्पन्न हुआ था। ऊँचे पर्वत पर बसा यह मनोहारी स्थान हमें आकर्षित कर रहा था, अपनी बस में बैठकर हम चल पड़े। मन प्रसन्नता से भरा हुआ था। हम अपने अंतिम लक्ष्य बद्रीनाथ जी के दर्शन हेतु आज जाने वाले थे। यह रास्ता और चढ़ाई वाला था बस गोल–गोल घूम–घूमकर ऊपर चढ़ रही थी, सुबह की धूप चारों ओर खिली हुई थी, सीढ़ीदार खेत अभी आँखें मल रहे थे। हम एक घंटे में पार्वती माता के विवाह स्थान पर पहुँचे, यहाँ पर्वत शिखर के ऊपर एक विशाल मंदिर बना हुआ है। पहाड़ों में फूल खिले हुए थे। मंदिर से दूर पर ही पूजन सामग्री सुन्दर सुन्दर थालियों में सजी हुई बिक रही थी, जिसमें चाँवल, फूल, सिन्दूर आदि मुख्य था। वहाँ चाँवल दान का विशेष महत्व है, सबने थालियाँ खरीदी। एक 6 वर्ष की सुन्दर सी परन्तु बिन नहाई–धोई लड़की मेरे पीछे पीछे पूजन की थाली लिए मंदिर तक आई। यहाँ पहले कुण्ड में हाथ पाँव धोने का जल था, दूसरे में पूजा के लिए। वहाँ हवन कुण्ड भी था, जहाँ राजा दक्ष ने विवाह में यज्ञ किया था, समिधाएँ छोटी–छोटी जुरियों में बिक रहीं थीं। जौ तिल गुड का साँकला भी बिक रहा था। हमने एक बड़े गोल घेरे में बैठकर पितरों को तर्पण किया। फिर प्रमुख मंदिर जिसका दर्शन दरवाजे के बाहर से करना पड़ता है, जो विष्णु भगवान् एवं लक्ष्मी जी का प्राचीन मंदिर है यह काले पत्थर का बना है। यहाँ के कुण्ड, ब्रम्हा कुण्ड, सरस्वती कुण्ड, रूद्र कुण्ड नाम से ख्याति प्राप्त हैं। यहाँ पहाड़ी सेवन्ती के लाल–लाल फूलों के साथ हमने फोटो खिंचवाये, चाय कॉफी पिया। पंडे पुरोहितों को दान दक्षिणा दिया। हाँ एक मनोरंजक घटना घटी, जहाँ हमने समिधा की लकड़ियाँ खरीदी थी और ज़लते हवन कुण्ड में समिधा डाली वहाँ एक दूसरे पंडे ने एक युवक को दिखाकर बताया कि ये मौनी बाबा हैं कुछ बोलते

नहीं। बस क्या था ? हम लोग शिक्षक थे पहले गायत्री मंत्र फिर महामृत्यंजय मंत्र से आहुतियाँ देने लगे, सभी देवताओं के नाम से स्वाहा कहा, वह चुपचाप हमें देख रहा था। उसकी ओर से बेखबर हमनें कुछ चिल्हर चढ़ाया और आगे बढ़े। हाय माँ ! वह तो ऐसा भड़का जैसे पलीता लगाने पर राकेट बम। "क्या सोचते हो ? मैं बोलता नहीं, इसका मतलब यह तो नहीं कि बिना कुछ चढ़ाये चले जाओ, तुम लोगों की हिम्मत कैसे हुई बिना दक्षिणा दिये जाने की"? वह हमें धिक्कारता हमारे पीछे–पीछे आया।

"अरे ये तो बोलते भी हैं"। हम सभी के चेहरों पर मुस्कान थिरक उठी। वह चिल्लाता रहा। हम लोग आगे बढ़ गये। क्योंकि जब पूजा नहीं करवाया तो दक्षिणा माँगने का क्या हक था उसे।

जिस पंडे ने हमें प्रारंभ से ही मार्ग दर्शन दिया, वह बड़ा संतोषी था जो कुछ दिया उसी में प्रसन्न हो गया। यथा स्थान बस में बैठकर हम लोग सीतापुर आये। वहाँ से अपना समान उठाकर बस में रखा गया, और हमारी बस बद्रीनारायण के दर्शन हेतु चल पड़ी। सब लोग कुछ जलपान कर चुके थे। हल्की फुल्की मनःस्थिति में थे। हमारी छोटी गाड़ी गौरीकुण्ड में किसी होटल में रुकी थी। सुना गया था कि रजवा की बेटी रमा, जिसने दीदी के छोटी गाड़ी में बैठने का विरोध किया था घोड़े से गिर पड़ी थी, बच गई बाल–बाल किन्तु चोट आई थी उसे। हमने अन्सारी के अलि की परवाह न करते हुए हनुमान् चालीसा प्रारम्भ किया। संकट मोचन, आरती फिर भजनों का जो क्रम चला कि सभी लोग अपने जमाने के नये पुराने भजन एक एक कर उठाते गये, गाते गये। हमारा गाना सुनकर अन्सारी ने टेप बन्द कर दिया। हमारी बस सोन प्रयाग, फाटा, नाला, होते कुण्ड आयी। यहाँ से पूर्व की ओर मुड़कर उखी मठ आये। यहाँ पुराना मंदिर है। जाड़े के चार माह केदारनाथ की श्रृंगार मूर्तियाँ यहीं स्थापित होती हैं। यही उनकी पूजा होती है। यह एक प्राचीन मठ है जहाँ ढेरो कमरे बने हुए

हैं, बड़े से प्रांगण में किनारे किनारे देवी–देवताओं की मूर्तियाँ स्थापित हैं, क्यारियों में खिले फूल मन को बाँधे ले रहे थे। यह एक शहर है हमें हर तरह की दुकानें, स्कूल, कॉलेज देखने को मिले। यहाँ से रवाना होकर हम चोपता होते हुए मंडल से गोपेश्वर, फिर चमोली आये, हमारी चढ़ाई जारी थी। हम अलकनंदा के उद्गम की ओर बढ़ रहे थे। घाट होते हुए हम पीपलकोटी पहुँचे, यहाँ से कुछ कि.मी. की दूरी पर गडोरा नामक स्थान है। ज्यादातार यात्री गाड़ियाँ यहीं रुकी थीं। यहाँ बहुत बड़े–बड़े लाज, रिसॉर्ट, होटल आदि हैं, जहाँ यात्री सुविधापूर्वक रह सकते हैं। हम लोग भजन में इस प्रकार तल्लीन थे कि पता ही न चला कि पहाड़ों के पीछे सूरज डूब गया। चाँदनी ने देवदार के वृक्षों को भूतहा साये में बदल दिया, आकाश में तेरहवीं का चाँद रात को रोशन करने के लिए अथक प्रयास करता हमारे साथ–साथ आगे बढ़ रहा था। आसमान साफ था, ठंडक सामान्य थी। गडोरा के होटल शेरे पंजाब के सामने हमारी बस रूकी, तब भी हम लोग भजन पूरा करने में जुटे थे। वाजपेयी जी का पुराना भजन जिसे मैंने बचपन मे रामलीला में सुना था –

हम पे चला गये टोना किशोर गोर साँवर सलोना,
राम–लखन को मैंने नगर में देखा
जैसे नीलम सोना, किशोर गोर साँवर........
हमपे लगाये गये टोना किशोर गोर साँवर ....
राम लखन को फूल बागिया में देखा,
हाथों में लिए फूल दोना, किशोन गोर साँवर .....
हमपे .....
राघव को देखी घुंघट पट दीन्हा
खुला रह गया मन का कोना, किशोर गोर साँवर ......
बाँके नयन से नैना जो मिल गये
हो गया जो कछु होना किशोर गोर साँवर .....

वाजपेयी जी मगन होकर सधे स्वर में गा रहे थे हम लोग उनका साथ दे रहे थे। आज हमारी यात्रा वास्तव में आनन्दमयी रही।

हमें ऊपर की मंजिल पर कमरा मिला। यहाँ भी मैं, त्रिपाठी जी एवं देवकी दीदी के साथ ठहरी। कमरे में पहुँचकर मुझे ख्याल आया कि शेरे पंजाब कहीं शाकाहारी, माँसाहारी ढाबा न हो। मैंने त्रिपाठी जी को पता लगाने भेजा। होटल तो शुद्ध शाकाहारी था। भीड़ बहुत थी खाने वालों की। हमने खाने वालों की संख्या बताकर ऑर्डर दिया। जब हम लोग भोजन करने नीचे पहुँचे तब तक शर्मा दम्पत्ति भोजन करके चले गये थे, अपने कमरे में आराम करने। आलू, मटर की सब्जी, दाल, रोटी और मोटे चाँवल का भात था। हमारे साथ पटेल जी का परिवार था, अन्य लोग भी खा रहे थे, सब्जी कम पड़ जाने के कारण कुछ गरम बातें भी हो गईं।

तीन लड़के एक ही रंग रूप के थे, जो सारा काम कर रहे थे परसना, पकाना, थाली उठाना, पानी देना आदि सब कुछ। वे थक कर चूर हो गये लगते थे। उस पर से हमारी डाँट खा रहे थे। मैंने थाली उठानेवाले नवयुवक से पूछा – ''बेटा, तुम लोग आपस में कुछ लगते हो'' ?

''हम तीनों भाई हैं माता जी''। उसने उत्तर दिया।

''पढ़ते नहीं क्या'' ?

''पढ़ता है, बी.ए., अंतिम का छात्र है, पढ़ाई में अधिक मन नहीं लगता''। उसके बड़े भाई ने बताया।

''मैंने मन ही मन उनकी प्रशंसा की। हमारे यहाँ पढ़ने वाले बच्चे घरू काम करना अपना अपमान मानते हैं।

''बहुत थक जाता है बेटा, पढ़ने का समय भी कहाँ मिलता होगा''। मैंने वत्सल भाव से उसे देखा।

''होटल किराये का है माताजी, जब बद्रीनाथ यात्रा बन्द हो जाती है तब हमें घर से किराया देना पड़ता है। मेहनत नहीं करेंगे तो

कैसे काम चलेगा"। उसने गंभीरतापूर्वक समझदारी की बात की। मुझे बहुत अच्छा लगा।

अन्सारी ने बता दिया था – "पाँच बजे निकल चले यहाँ से, वर्ना आगे बेरियर लग जाता है। मार्ग बेहद सँकरा है, एक तरफ की गाड़ी रोककर दूसरी तरफ की बढ़ाई जाती है। रोक दी गई तो घंटों बरबाद हो जायेंगे। आप लोग समझना फिर।

(10)

दिनांक 10–10–2011, सोमवार–

हम लोगों ने समय से पूर्व ही उठकर नित्यक्रिया से निवृत्त होकर अपना सामान समेटा, सभी तैयार थे। फिर भी हम एक घंटा विलम्ब से यात्रा पर निकल सके। आज स्नान बद्रीनाथ में करना था। सबने चाय–कॉफी ले लिया था। अब हम गोल–गोल घूमकर पहाड़ चढ़ते जा रहे थे। निरन्तर ऊँचाई बढ़ती जा रही थी। अन्सारी ने मेरा पीर बादशाह है, चला दिया था हमने भी हनुमान् चालीसा प्रारम्भ कर दिया। हम सभी प्रसन्न थे, आज भी भजन प्रारम्भ हुए मैंने गाया, जरा इतना बता दे कान्हा तेरा रंग काला क्यों?

तब कान्हा कहते हैं :–

मैंने काली रात में जनम लिया मेघों का रंग वाला इसीलिए काला हूँ

मैंने काली नाग को नाथ दिया, नागों का रंग काला इसीलिए.........

मैंने काली गाय का दूध पिया, मेरी कमली भी काली इसीलिए.........

हम अलकनंदा की धारा की विपरीत दिशा में चढ़ रहे थे, हेलंग के बाद जोशीमठ आया, जहाँ छः माह बद्रीनाथ जी की पूजा होती है। उनकी चलित मूर्ति लाकर यहाँ स्थापित की जाती है। यह एक शहर और पुरानामठ है इसकी स्थापना आचार्य शंकर ने की थी। समीप ही

नरसिंह जी का मंदिर है। अस्पताल, डाकघर, बाबा कालीकमली वाले की धरमशाला एवं विशाल गुरूद्वारा है। यहाँ से तपोवन वाले मार्ग से बढ़कर हम विष्णु प्रयाग पहुँचे, यहाँ धौली गंगा और अलकनंदा का संगम हैं। हम यहाँ नहीं रुके। घाटचट्टी से होकर गोविन्दघाट पहुँचे। हमारा भजन निरंतर चल रहा था। बद्रीनाथ जी का भजन उसी समय बन गया –

ऊँचे बसे बद्रीनाथ विकट वन में, –2
विकट चढ़त मोरे पैर दुःखत हैं – 2
गाड़ी भेजो बद्रीनाथ विकट वन में
ऊँचे बसे बद्रीनाथ ......
विकट चढ़त मोहें भूख लगत है,
भोजन भेजो बद्रीनाथ विकट वन में,
ऊँचे बसे बद्रीनाथ ....
विकट चढ़त मोहे डर लगत है,
हिम्मत बाँधो बद्रीनाथ विकट वन में,
विकट चढ़त मोहे नींद लगत हें,
पलंग भेजो बद्रीनाथ विकट वन में,

प्रभात की स्वर्णिम किरणें पर्वतराज का आलिंगन कर रहीं थीं, यह एक सुहानी भोर थी, पक्षियों का कलरव तो नहीं था किन्तु अलकनंदा की ऊपर से नीचे गिरती जल धारा का शोर वातावरण का सन्नाटा भंग कर रहा था। घाटियों में हरियाली छाई थी। जहाँ–तहाँ केले के बगीचे लगे हुए थे। गोविन्द घाट से हमारी बस देवदर्शनी पहुँची। यहाँ सपाट मैदान है, यहाँ से मंदिर के दर्शन हो रहे थे। समुद्रतल से बद्रीनाथ की ऊँचाई 5110 मीटर है। यहाँ नर नारायण नाम के दो पर्वत हैं। नर–नारायण विष्णु के अवतार माने जाते हैं। इन्होंने बेर खाकर अनंतकाल तक यहाँ तप किया, इसीलिए इसे बदरीकाश्रम भी कहते हैं। नर नारायण के तप से जब इन्द्र का

सिंहासन डोलने लगा तब उन्होंने अप्सराओं को उनका तप भंग करने के लिये भेजा। नारायण ने अपनी जंघा से उर्वशी को उत्पन्न किया और इन्द्र के पास भेज दिया, वह शर्मिन्दा हुआ और निर्भय भी।

चढ़ाई से उतरकर समतल में भगवती अलकनन्दा के दाहिने किनारे पर श्री बद्रीनाथ पुरी बसी है। जिसमें इस समय सुन्दर बाजार, बड़ी–बड़ी धरमशालायें, तार घर, अस्पताल, डाकघर आदि हैं। हम लोगों की बस सीधे मंदिर के पास पहुँच कर परमार्थ धर्मशाला मैदान में रुकी। इस समय मात्र साढ़े नौ बज रहे थे। कई लोगों ने नहा धोकर अपने कपड़े फैला रखे थे। त्रिपाठी जी आदि ने जाकर एक धर्मशाला में कमरे बुक कराये। हम तीनों यहाँ भी एक ही कमरे में रुके थे। हमारे सामने पटेल जी का कमरा था, नीचे का कमरा शर्मा जी को मिला था। हमारी छोटी गाड़ी के सहयात्री भी पहुँच चुके थे, उनका कमरा भी हमारे कमरे के समाने ही था। मैंने रमा से उसका हालचाल पूछ लिया। कमरे में सामान सुरक्षित रखकर हम सभी मंदिर की ओर चल पड़े। यहाँ आकर अब प्रभु के दर्शन में विलम्ब बर्दाश्त के योग्य नहीं था। हम सभी साथ ही थे, पहले नीचे उतरे, वहाँ अलकनन्दा के पार जाने के लिए एक पुल बना हुआ है। जिसे पार कर हम ब्रम्हकुण्ड आये। कहते हैं यहाँ अपने पितरों का तर्पण अवश्य करना चाहिये, यहाँ का पिण्डदान गया से आठ गुना अधिक फलदायी है। पुराणों में उल्लेखनीय है कि सरस्वती के ऊपर ब्रम्हा के मोहित होने के कारण (इसे हम इस प्रकार समझ सकते हैं, ब्रम्हा अर्थात् सृजन कर्ता, उन्होंने अपनी शक्ति से सृजन की देवी सरस्वती को जन्म दिया, किन्तु सृजन की शक्ति का विकास उन्होंने अपने भीतर तप से किया था, इसप्रकार वे उनकी पुत्री हुई। उसके बिना वे सृजन करने में असमर्थ थे। सृजन शक्ति का स्वामी होना आवश्यक था अतः उन्होंने सरस्वती का वरण किया, ये शक्तियों के रूप हैं, मनुष्यों की भाँति शारीरिक संसर्ग से न इनका जन्म होता है न ये बूढ़े होते हैं इसीलिए इस भ्राँत्ति में कोई न

पड़े कि हमारे सबसे बड़े देवता ने अपनी पुत्री से विवाह किया। यह मिथक ठीक वैसा ही है जैसे कम्प्यूटर के आविष्कारक कम्प्यूटर से यथेच्छ कार्य लें।) शंकर जी ने उनका सिर काट लिया। वह सिर उनके हाथ से चिपक गया। सारे तीर्थों में घूमते रहे शंकर जी, किन्तु हाथ मुक्त नहीं करा सके। जब ब्रम्हकुण्ड आये तब हाथ से सिर छूटकर इसी कुण्ड में गिर पड़ा। हमारा पंडा हमारे साथ था जो बिना आमंत्रण के ही हमारे साथ लग गया था। इससे थोड़ी चढ़ाई पर तप्तकुण्ड है। इसका जल कहाँ से आ रहा है कुछ पता नहीं है। पुराणों में उल्लेख मिलता है कि अपने सर्वभक्षी होने के पाप से मुक्त होने के लिए अग्नि ने एक बार बदरीनारायण में घोर तप किया। उनकी स्तुति से प्रकट हो भगवान् बोले हे पुत्र वर माँग। तब अग्नि ने प्रार्थना की हे प्रभु मैं सर्वभक्ष्य पाप से मुक्त होना चाहता हूँ, इस पाप से बहुत दुःखी हूँ। कृपया मुझे निर्भय कर दीजिए। भगवान् बोले "इस क्षेत्र में निवास से ही तुम निष्पाप हो चुके हो। तभी से वे तप्तकुण्ड के रूप में विराजमान हैं इस कुण्ड में स्नान से करोड़ों चन्द्रायण तथा कृच्छ व्रतों से अधिक फल प्राप्त होता है। तप्तकुण्ड के नीचे अलकनंदा में बड़ी बड़ी शिलाओं के मध्य नारदकुण्ड के भी नीचे ब्रम्हकुण्ड, गौरीकुण्ड तथा सूर्यकुण्ड स्थित है। इसी में से जल लेकर स्नान हेतु पुरूषों के लिए अलग और महिलाओं के लिए अलग कुण्ड बनाया गया है। सर्वप्रथम स्नान आवश्यक था। अतः हमारे पुरूष साथी अपने स्नानागार की ओर बढ़े। हम महिलाओं वाले तप्तकुण्ड की ओर बढ़ीं। भीड़ बहुत ज्यादा थी, अन्दर वस्त्र रखने पहनने का स्थान बना था किन्तु सफाई की उचित व्यवस्था का अभाव जान पड़ा। यहाँ कुण्डों में वस्त्र धोना या साबुन लगाना मना है। अतः हम लोग वस्त्र उतारकर नहाने के कपड़ों में कुण्ड के पास पहुँचीं। दीदी को मैं सम्हालकर कुण्ड तक ले गई थी। जल छूकर देखा तो सहन शक्ति से अधिक गर्म था, वहाँ कोई महिला कुण्ड में उतरकर नहीं नहा पाई। हम सभी ने

वहाँ रखे मग्गे से स्नान किया। गर्म जल का स्नान वरदान से कम न था, शरीर की सारी पीड़ा मिट गई। मन का सारा सन्ताप शीतल हो गया। पटेल जी के यहाँ की दोनों महिलाएँ हमारे साथ ही थीं, धनेश्वरी अपनी समधिन वेदमती के कपड़े बदलवा कर हमारे साथ ही बाहर आई।

पुरूष साथी भी नहाकर बाहर आ चुके थे। वहाँ का जल कुछ कम गर्म था, अतः वे लोग कुण्ड में उतरकर नहाये थे।

ब्रम्हकुण्ड में बैठकर हम लोगों ने अपने पूर्वजों का तर्पण किया। मैं अपने पति के साथ गया कर आई हूँ, चाहती थी कि यहाँ भी पिण्डदान कर दूँ। किन्तु पण्डा किसी प्रकार तैयार नहीं हुआ, उसका कहना था कि स्त्री को यह अधिकार नहीं है। जब पति के साथ आओगी तब करना। मैंने कहा मेरे पति उम्रदराज हैं। उनका आना असंभव है, मैं उनकी तरफ से अपने पूर्वजों का पिण्डदान करूँगी"। वह नहीं माना, हमने तर्पण कर के ही संतोष प्राप्त किया। यहाँ मातृ कुल के लिए भी तर्पण का अधिकार है। हाल में ही दिवंगत हुए अपने पूज्यपिता जी का मैंने तर्पण किया। यथाशक्ति दान दक्षिणा देकर हम लोग मंदिर की ओर बढ़े। प्रसाद की सजी थालियाँ ले ली। सीढ़ियों से चढ़कर मंदिर तक पहुँचना था, यहाँ स्वच्छता की व्यवस्था अच्छी थी। हम लाइन से ऊपर चढ़ रहे थे। सीढ़ियों पर झाड़ू लगाने वाले हमसे कुछ पाने की उम्मीद में हमें देख रहे थे। उनके हाथ आगे को फैले हुए थे। वापसी में दे देंगे यह सोचकर ऊपर चढ़ते गये। प्रभु के दर्शन होने वाले हैं इस कल्पना से मुझे रोमांच हो रहा था, पुलकित मन किसी बच्चें के समान दौड़कर पिता से लिपट जाने को हो रहा था। किन्तु दरबार का अनुशासन तो निभाना ही था, पिता कोई खेतिहर नहीं हैं, जिन्हे जहाँ पायें गोद में चढ़ जायें। ये तो ब्रम्हाण्ड पति का दरबार है उनके दरबार की मर्यादा का पालन आवश्यक था। हमारा नम्बर आया। हम लोग आगे पीछे ही थे यहाँ मैं दीदी के पीछे थी।

लाइन लगाने के लिए बने गलियारें में एक ही पंक्ति अन्दर प्रविष्ठ हो सकती थी। भीड़ का धक्का खाते हुए अन्दर पहुँचे। ज्ञात हुआ कि जो टिकिट कटाता है वहीं नजदीक से दर्शन कर सकता है बाकी को बरामदे में खड़े होकर दर्शन करना होगा। बरामदे से लगभग 10 फुट की दूरी पर दरबार है। भली–भाँति दर्शन हुए हमें। उस समय पिता अपने श्यामल शरीर पर बहुमूल्य वस्त्राभूषण धारण किये हुए थे। उनके सिर पर रत्नज़ड़ित मुकुट शोभा पा रहा था। इनके ललाट पर हीरा जड़ा है जो तीसरी आँख की भाँति किरणें बिखेरता रहता है। इनके दाहिनी ओर कुबेर तथा गणेश जी और बायीं ओर श्री लक्ष्मी जी के साथ नारायण गण विराज रहे हैं। साथ ही गरूड, रूद्र आदि की मूर्तियाँ भी समीप ही सुशोभित हैं, हमने बरामदे से मंदिर को अलग करने वाले घेरे के पास दान पेटी के पास बड़ी सी टोकरी में प्रसाद रखे बैठे पंडा जी को अपनी अपनी थालियाँ दीं, उन्होंने टोकरी में रखे प्रसाद में उसे डाला, फिर उसी में से थोड़ा सा निकालकर हमारी थाली में डाल दिया। पीछे भीड़ बहुत थी, अतः हम लोग शीघ्र ही वहाँ से बाहर ढकेल दिये गये। हमें लग नहीं रहा था कि अभी अभी एक पल पहले हम इतनी कठिन यात्रा का फल पा चुके हैं, हम बद्री विशाल के दर्शन कर चुके हैं। **(रंगीन चित्र 14– बद्रीनाथ का मन्दिर)**

मंदिर के चारों ओर बड़े से घेरे में मूर्तियाँ सजी हुई हैं जिनमें द्वारपाल, बजरंगबली, शंकराचार्य दुर्गा माता आदि की मूर्तियाँ सुसज्जित हैं यहाँ का सारा कार्यक्रम व्यवस्थित है कार्यालय में जाइये, संतों के भोजन के लिए रसीद कटाइये। मंदिर में दान दक्षिणा दीजिए, पूजा में अन्दर बैठने का शुल्क अलग है। वे अन्दर बरामदे में बैठकर विधिपूर्वक पूजन कर सकते हैं बाकी लोग बरामदे के बाहर से दर्शन कर सकते हैं। संभवतः पूजन सामग्री की व्यवस्था के लिए यह सब किया गया है। यह भी हो सकता है कि भीड़ को नियंत्रित करने का एक तरीका हो

यह। हम अभी परिक्रमा कर ही रहे थे कि भोग का समय हो गया, कुछ मिनट को मंदिर को कपाट बन्द हुए। उसके बाद भोग बँटने लगा, बड़े से गंज में चाँवल और बाल्टी में दाल लेकर वहाँ का कर्मचारी बाँटने लगा। सारी भीड़ उसके पास जमा हो गई, सब भिखारियों से भी ज्यादा लालायित थे, इस महाप्रसाद के लिए। क्यों न हो ? जगत पिता का प्रसाद जो होता है यह। छोटे बड़े का कोई भेदभाव नहीं। वहाँ दोना मिलता है उसे लेकर खड़े होकर कोशिश करते हैं लोग। प्रसाद सभी को मिलता है। मैंने एक जगह भीड़ कम देखी, मंदिर के बरामदे के द्वार के किनारे एक पंडा महराज खिचड़ी का भोग लिए कुछ लोगों को दे रहे थे। मैंने सोचा यहीं से जरा सा माँग लिया जाय। परन्तु वहाँ माँगने पर पता चला जो व्यक्ति पैसा देकर अलग से भोग लगवाते हैं उन्हें अलग से मिलता है। मैं फिर भीड़ में शामिल हुई। मुझे दे दीजिए, मुझे दे दीजिए कहते, हाथ का दोना ऊपर रखे, पंडा ने एक बार एक करछुल दाल डाली। अब भात के लिए पुकार शुरू की, तब तक पीछे से धक्का पड़ा, दोने की सारी दाल मुझे नहला गई। यदि मैं कपड़ा साफ करने के चक्कर में पड़ती तो भोग न मिलता। इस लिए उसे जैसे का तैसे छोड़कर भोग प्राप्त किया। सभी लोगों ने भोग प्राप्त किया। पीछे की तरफ दोना फेंककर उसी तरफ लगे नल पर हाथ मुँह धोया। हम परम संतुष्ट थे। ऐसा भोजन जीवन में पहली बार किया था। उत्तरांचल का प्रसिद्ध चाँवल बासमति अपनी सुगंध से हमें मुग्ध कर रहा था। न अचार, न चटनी, न किसी प्रकार की सब्जी, मात्र दाल चाँवल इतना स्वादिष्ट कि वर्णन करना मुश्किल है। मैंने आराम से लिखे हुए शिलालेखों को पढ़ना प्रारम्भ किया – जिससे मुझे मंदिर की ऐतिहासिकता के बारे में पता चला। बद्रीविशाल की वर्तमान मूर्ति पौराणिक काल की श्री नारद जी द्वारा पूजित है, देश में बौद्ध लोगों ने जिसे अलकनंदा में डाल दिया था। आठवीं शताब्दी में श्री आदिशंकराचार्य ने दक्षिण भारत से आकर इस मूर्ति को नारदकुण्ड से

निकालकर तप्तकुण्ड के पास गरूड़ कोटि नाम की गुफा में स्थापित किया। तभी से श्री बद्रीनाथ जी की पूजा दक्षिण भारत के नंबुद्री जाति के ब्राम्हण ही करते आ रहे हैं। जिन्हें रावल कहा जाता है। बौद्ध लोग इस मूर्ति को बुद्ध की, जैन लोग इस मूर्ति को पारसनाथ या ऋषभदेव की बतलाते हैं। भगवान् का वर्तमान मंदिर गढ़वाल नरेश ने विक्रमीय पन्द्रहवीं शताब्दी में बनवाया। श्री बद्रीनाथ जी के मंदिर के ऊपर जो सोने का कलश है उसे इन्दौर की प्रसिद्ध रानी अहिल्याबाई ने चढ़ाया था। यहाँ भगवान् की मूर्ति को रावल तथा उनके सहायक के सिवा कोई स्पर्श नहीं कर सकता। भगवान् का प्रसाद पाने का बड़ा महत्व है। यहाँ का भोग साक्षात् लक्ष्मीजी बनाती हैं और श्री नारायण बाँटते हैं। भगवान् की दैनिक पूजा नारद पंचरात्र तथा वैखानस पद्धति से की जाती है। प्रत्येक हिन्दू की अभिलाषा होती है कि वह अपने जीवन में बद्रीनाथ, केदारनाथ की यात्रा करे। शास्त्रों में इस तीर्थ की महिमा का विषद वर्णन मिलता है। कलयुग में जो मनुष्य एक बार बद्रीनाथ की यात्रा करता है वह साक्षात् विष्णुरूप हो जाता है। यह तीर्थ अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष प्रदाता है। यह परम पवित्र क्षेत्र लगभग पच्चीस कि.मी. चौड़ा और 100 कि.मी. लम्बा है।

मैंने मंदिर प्रांगण से सामने के दृश्य पर विहंगम दृष्टि डाली। ऊँचाई से पूर्णवेग से नीचे की ओर गिरती अलकनंदा की धारा जहाँ पापियों के मन में भय उत्पन्न करने वाली है वहीं मुमुच्छु जनों को निर्वेद से भर देने वाली है। स्वच्छतम जल धारा का स्वर वातावरण में गूंज रहा था। धारा धर्मशीला नाम की एक वृहद शिला पर गिर रही है। जल की बून्दे शिला से टकराकर जल की नन्हीं नन्हीं बून्दों के रूप में वातावरण में कोहरे समान प्रतीत होतीं हैं। कहते हैं यहाँ अष्टवसुओं ने 34 हजार वर्ष तक तप किया। यह तीर्थ ब्रम्हहत्या आदि के पापों को दूर करता है। जिसके सिर पर ये बून्दे गिर जाती है। वह पापी नहीं रह जाता। प्रभुधाम का अद्‌भुत दृश्य देखकर मन हर्षविभोर हो

रहा था। इस पुरी के पश्चिम में उर्वशी कुण्ड है। सामने मुचकुंद ऋषि का आश्रम दिख रहा था, वहाँ हम शाम को जाने वाले थे।

खिड़की के पास भीड़ लगी हुई थी, शाम की आरती हेतु लोग रसीद कटा रहे थे। हमारे शर्माजी अपने बच्चों के नाम से संतों के भोजन हेतु रसीद कटा रहे थे। मुझे याद आया, घर से चलते समय मेरी बड़ी पुत्रवधू ने 100 रूपये देकर कहा था कि मंदिर में हमारी ओर से प्रसाद चढ़ा देना। मैंने प्रसाद खरीदकर दे दिया चढ़ाने को। शेष 50 रूपये चढ़ा दिये।

हम सभी अपने कमरे में आये। लगभग दो बज चुके थे। अब हमें आसपास बसे श्रेष्ठ स्थानों के दर्शन हेतु जाना था। गीले कपड़े सूखाकर निकले, छोटी गाड़ी भी साथ थी, हम भारत चीन सीमा का अंतिम गाँव माना अर्थात् मणिभद्रपुर जा रहे थे, यह बद्रीनाथ जी में मंदिर से तीन कि.मी. की दूरी पर अलकनंदा के बायें तट पर बसा हुआ है। जहाँ तक बस जा सकती थी गई। उसके बाद हम लोग पैदल चल पड़े, यहाँ से सीढ़ियों के ऊपर चढ़कर गणेश गुफा जाना था। दीदी चढ़ नहीं सकती थीं अतः उन्हें बस में ही छोड़ दिया गया। अन्सारी भी वहीं रुक गया था। गणेश गुफा में गणेश जी की विशाल मूर्ति है, जो पहाड़ काटकर उकेरी गई है। यहाँ सुन्दर मंदिर बना हुआ है, ध्वजा पताका से सुसज्जित है। भारत चीन सीमा की अन्तिम चाय की दुकान है। उत्तरांचल का राजकीय फल फुटबाल जितना बड़ा और शेष रंग रूप में मौसम्बी जैसा होता है अन्दर से उसका रंग लाल, अनार के रंग का होता है जिसे वहाँ बुराँश कहते हैं, उसका रस गिलास में भरकर रखा हुआ था, हम लोग चाय पीने गये थे मैंने कॉफी खोजी, फिर बुराँश का रस पिया, जो बड़ा स्वादिष्ट था, संतरे के रस से मिलता जुलता।

यहाँ पास ही व्यासगुफा भी है। हम वहाँ भी गये। वहाँ मंदिर बना हुआ है। गणेश जी हाथ में लेखनी लिए लिख रहे हैं व्यास जी

आँखे बन्द किये तर्जनी उठाये कुछ बोल रहे हैं। शास्त्राध्यन से ज्ञात तथ्य स्मरण हो आया। महाभारत कथा लिखने के लिये श्री गणेश जी से विनय की गई। उन्होंने शर्त रखी मुझे रुकना न पड़े, यदि रुका तो आगे नहीं लिखूँगा।" **(रंगीन चित्र 15– भारत–चीन सीमा)**

"ठीक है भगवन् किन्तु आप मेंरे श्लोकों का अर्थ समझकर लिखेंगे, व्यास जी ने प्रार्थना की। गणेश जी ने स्वीकार किया था। पण्डा जी ने महाभारत रचना काल की कुछ जानकारियाँ दीं। हम लोग चढ़ावा चढ़ाकर बाहर आये। पहाड़ों पर शाम जल्दी घिर आती है। यहाँ से पास ही भीमपुल है, शाम चार बजे थे लग रहा था जैसे एकदम शाम हो गई। पथ से हम सभी अनभिज्ञ थे।। इसलिए अंधेरा घिरने के पूर्व बस के पास तक आ जाना चाहते थे। हम जल्दी जल्दी चले, गणेश गुफा से नीचे उतरकर जाना था, जहाँ हमें सरस्वती का उद्गम देखने को मिलने वाला था।

वहाँ पहुँचकर हम प्रकृति की कारीगरी देखकर अचम्भित रह गये। एक बड़ा पहाड़ का हिस्सा था जिसे नदी पर डालकर पुल जैसा बनाया गया है श्रोतव्य है कि जब पाँचों पांडव स्वर्गारोहण कर रहे थे, तब नदी पार करने के लिए भीम ने यह पहाड़ उठाकर रख दिया था। इसी पर से होकर पाँचों पांडव और द्रौपदी आगे बढ़े थे। पास ही एक नया पुल बना हुआ है। भारत–चीन की सीमा पर एक छोटा सा सरस्वती जी का मंदिर बना हुआ है। यही गाँव आखिरी है जहाँ तक आम आदमी जा सकते हैं, आगे कुछ कि.मी. सेना के अधिकार में है, उसके बाद तिब्बत की सीमा है। पहाड़ पर रहने वाले लोग अपने अपने घरों के सामने ऊनी कपड़े टाँगकर बैठे थे, बेचने के लिए। पहाड़ी औरतें स्वेटर, टोपा, मफलर बुनती बैठी थीं, उनके आँगन में कहीं–कहीं भेड़ के बालों की ढेरी रखी दिख रही थी। मैंने एक महिला से पूछा तो उसने बताया कि यह कारखाने जायेगा वहाँ धुनाई रंगाई होगी तब ऊन बनेगा।

ऊपरी क्षेत्र से घास के बड़े–बड़े गट्ठर पीठ पर लादे उन्हें पहाड़ उतरते चढ़ते देखकर हम मन ही मन उनकी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सके। साथ ही अपने भाग्य की सराहना करनी पड़ी। हमें भगवान् ने ऐसे स्थान पर जन्म दिया, जहाँ भूमि समतल उपजाऊ, प्रचुर पेयजल न अधिक गरमी न अधिक ठण्डी, जल आपुरित नदियाँ, फलों, लकड़ियों, वन्य प्राणियों से भरे क्षेत्र हैं। हमारा जीवन सरल, सहज है, किन्तु हमारी कार्यक्षमता इतनी नहीं है, हम लोग मधुमेह और उच्चरक्त चाप से ग्रसित हैं, शायद बिना मेहनत के खाने वालों को प्रभु पसन्द नहीं करते, तभी तो इतना बोझा, ढोना, खेती का काम, भेंड़ पालन, शिशु पालन करते हुए भी ये पहाड़ी औरतें एकदम स्वस्थ हैं, उनकी सुन्दरता की तुलना अप्सराओं से की जा सकती है। शायद यह यहाँ की शुद्ध जलवायु का परिणाम है। इतने लोग आ जा रहे हैं परन्तु कहीं भी पोलीथिन का ढ़ेर नहीं है। जगह जगह पोलिथिंन एकत्र करने वाले हैं। नदियों की स्वाभाविक स्वच्छता विद्यमान है। हमारे यहाँ तो यमुना नदी दिल्ली मे एक नाले की शक्ल अखतियार कर चुकीं हैं, इलाहाबाद, कानपुर में गंगा में स्नान मुश्किल है, शहर भर की गंदगी से नदी का जल अशुद्ध हो चुका है। एक कदम भी पैदल चलना हमारी शान के खिलाफ है, इसी वजह से इतनी, मोटर साइकिलें, कारें, बसें, ट्रकें व ट्रेक्टर हवाई जहाज आदि का प्रयोग करते हैं कि डीजल पेट्रोल के धुएं से दम घुटता है। वनों को काटकर कल कारखाने बना लिए, भवनों को सजा लिया है। अधिक उत्पादन हेतु रासायनिक उर्वरक डाल डालकर खेतों की मिट्टी का सारा पोषक तत्व निचोड़ लिया। आबादी इतनी बढ़ी की उसकी आवश्यकता पूर्ति हेतु हमें प्रकृति का संतुलन बिगाड़ना पड़ा। अब मधुमेह, उच्चरक्त चाप, अस्थमा, अभिशाप मिला तो क्या रोना ?

हम उस स्थान पर खड़े थे जहाँ से अलकनंदा की जलधारा का दर्शन होता है। यह जलधारा कहाँ से आ रही है हमें इसका कुछ

पता नहीं चल सका, ऊपर जाने का पैदल मार्ग है सेना के लोग या कुछ स्थानीय लोग आते जाते दिखई दे रहे थे। अलकनन्दा की धारा की ओर मुँहकर खड़े होने पर हमारे पीछे एक ऊँचा पहाड़ है जिसमें से गिरने वाली पतली जलधारा सरस्वती नदी है यह ऊपर मानसरोवर से निकलकर यहाँ प्रकट होती है। यहीं अलकनन्दा में मिलकर केशव प्रयाग का निर्माण करती है। हमने दृष्टि भरकर सभी स्थानों को देखा। कैमरे में सुरक्षित किया और अलकनन्दा के किनारे–किनारे बस के पास चल पड़े हमारे सभी साथी आगे पीछे बस के पास पहुँचे। तब तक अंधेरा घिर आया था। बड़े ध्यान से पर्वत की शाम देखीं मैंने। बिना देखे कोई उसकी सुन्दरता का अंदाजा लगा ही नही सकता। आकाश पश्चिम की ओर सुनहरा हुआ। कुछ बादल आसपास आये। सूर्य का सिन्दूरी गोला बीच में चमकता रहा। धीरे–धीरे घाटी में जाकर अदृश्य हो गया। यहाँ से बर्फ से ढंकी चोटियाँ श्वेत परिधान पहने एकान्त में एक पैर पर खड़ी हठ योगिनियाँ लग रही थीं। कहीं सीढ़ियाँ चढ़ना कही उतरना, मेरी साँस तेज चल रही थी।

"हमारे तखतपुर के दुर्गादास साव को आप जानती हैं"?

समय परिस्थिति से बेमेल त्रिपाठी जी का प्रश्न सुनकर मैं सचेत हुई।

"हाँ भैया जानती हूँ, ऐसा कोई स्थान नहीं हमारे जिले में, जहाँ उनका बनवाया हुआ यात्री प्रतीक्षालय/धर्मशाला पत्थर की बेंच, कुआँ, नल इत्यादि न हों, सब जगह लिखा रहता है आपका सेवक दुर्गादास साव"। एकबार देखी भी थी, तखतपुर के पुराने मोटर स्टेण्ड में, लट्ठे की धोती पहिने थे, ऊपर लट्ठे का ही कपड़ा ओढ़ रखा था। तब मैं नई दुल्हन थी, उनसे बातचीत की हिम्मत नहीं हुई। मैं उनके बारे में उतना जानती भी नहीं थी"। मैं कहती चली गई।

"उन्होंने यहीं अलकनन्दा की धार में दो वर्ष पूर्व जल समाधि ले ली"।

"उनकी बात से मुझे सदमा पहुँचा"।

"आखिर क्यों ? इतने धर्मात्मा व्यक्ति को जल समाधि लेकर संसार छोड़ना पड़ा" ? मैं व्यग्र हो उठी।

"आप जैसा कि जानती हैं, साव जी एक धनीमानी निःसन्तान व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति यहाँ तक की पत्नी के गहने भी परमार्थ में लगा दिये। दूसरों से दान लेकर भी जनता की सेवा की। पत्नी के मरने के कुछ दिन बाद वे एकदम अकेले रह गये। स्वास्थ्य खराब हो गया। न तो उनके पास जन था न धन। बड़ी मुश्किल से तबियत सुधरी। किसी ने उनकी सुधि न ली, अखवार वाले चिल्लाकर चुप हो गये कि साव की हालत चिन्ताजनक है। सुनकर कोई उनका हाल जानने न पहुँचा। उनका दिल टूट गया इस संसार से। जब थोड़े अच्छे हुए तब बदरी केदार की यात्रा की और अपना कार्यपूर्ण हुआ जानकर अलकनंदा में जल समाधि ले ली। इस आशय का पत्र जब तक उनके जानने वालो को मिला, उन्हें संसार छोड़े पन्द्रह दिन हो चुका था। वे गंभीर थे।

सावजी का इस प्रकार का अन्त सुनकर मन भारी हो गया। संसार की असारता पर विश्वास और दृढ़ हो गया।

हम सभी पहले कमरे में आये। आज हमें यहाँ रात्रि विश्राम करना था। शाम ढलते ही आकाश पर चौदहवीं का गोल–गोल चाँद अठखेलियाँ करने लगा। आकाश एकदम साफ था, परन्तु रात में बर्फ पड़ सकती है ऐसी आशंका जता रहे थे वहाँ के रहवासी। हम लोग बड़े भाग्य से उस रात वहाँ रह रहे थे। बद्रीविशाल की आरती में शामिल होने के उद्देश्य से सभी लोग घूमते–घामते निकले। आरती में शामिल होना अपने आप में एक सुखद अनुभूति थी। जिन लोगों ने प्रातः रसीद कटवा ली थी वे अन्दर बरामदे में थे। हम लोग बाहर थे। वहीं से आरती की ज्योंति से देदीप्यमान प्रभु बद्री विशाल की श्यामल छवि का दर्शन कर अपना जीवन धन्य मान रहे थे। आरती, प्रसाद

आदि लेकर हम लोग अलकनन्दा का पुल पारकर शहर की ओर आये, भोजन हेतु एक ऐसा होटल पसन्द आया जो देखने में झोपड़ी जैसा था। उसका प्रबंधक या मालिक एक काले रंग का अधपकी दाढ़ी मूछों वाला अधेड़ उम्र का व्यक्ति था, उसकी पूरी वेशभूषा मलिन थी, किन्तु वह हमें सस्तें में अच्छा भोजन अर्थात् दाल–भात, रोटी, सब्जी, अचार, पापड़ के साथ कढ़ी भी देने वाला था वह भी 50 रूपये प्रति थाली के हिसाब से। सब लोगों ने वहीं रात का भोजन किया। खाना सामान्य था गरम होने के कारण तृप्ति का एहसास हुआ, त्रिपाठी जी ने कहा "घर छोड़ने के बाद का यह सबसे अच्छा खाना है"। हम सभी ने उनका समर्थन किया।

परमार्थ धर्मशाला का रास्ता भूल जाने के कारण हम देर तक वहीं वहीं घूमते चढ़ते उतरते रहे। एक आदमी से पूछने पर उसने सही रास्ता बताया। हम लोग परमार्थ धर्मशाला के पास ही थे।

(11)

दिनांक 11–10–2011, मंगलवार :–

उस दिन की सुबह हम लोग प्रातः पाँच बजे उठे। उस दिन भी तप्तकुण्ड में स्नान कर एक बार और दर्शन पूजन करना चाहते थे। ठंड हड्डी ठिठुराने वाली थीं। जल तो गर्म था किन्तु एक बार कपड़े तो बदलने ही पड़ेंगे, मन बहुत भय खा रहा था ठण्डी से। हम सभी एक साथ आराम से तप्तकुण्ड गये। स्नान आज भी मग्गे से हुआ। पूजन दर्शन कर जितना हो सका फोटोग्राफी कर दृश्य कैमरे में सुरक्षित किया। जब हम सभी बस के पास आये तब मुश्किल से साढ़े आठ बजे थे। आज शरद पूर्णिमा थी इस सर्वश्रेष्ठ तीर्थ में स्नान दर्शन पूजन से हमें परमानंद की प्राप्ति हुई। सूर्य निकल आया था चारों ओर चमकीली धूप फैल गई थी। प्रातःकालीन धूप में हिमाच्छादित चोटियाँ, स्वर्ण शिखर की भाँति दृष्टिगोचर हो रही थीं। हमारी दोनों गाड़ियाँ साथ–साथ रवाना होने वालीं थीं। अभी अन्सारी अगरबत्ती वगैरह

जला रहा था कि, शॉल वाले बस में घुस आये, सस्ते में भाव पट गया। हम सभी ने एक एक शॉल खरीद ली। इस दिव्य पुरी को प्रणाम कर हनुमान् जी की जय बोलकर हम सभी वापस मुड़े।

आज हमें पूर्ण संतोष था हमारी चारों धाम की यात्रा निर्विघ्न सम्पन्न हो गई थी। यात्री दल के सभी यात्री स्वस्थ और प्रसन्न थे, अब हम हरिद्वार की ओर लौट रहे थे। इस बार हम जोशीमठ से होते हुए हरिद्वार पहुँचने वाले थे। हमारी बस अलकनंदा के किनारे किनारे उसके संगम की ओर बढ़ रही थी। पाण्डुकेश्वर, विष्णु प्रयाग, (अलकनंदा और धौली गंगा का संगम) तपोवन होते हुए हम जोशी मठ पहुँचे। यहाँ कुछ समय के लिए बस रूकवा कर, जलपान किया गया। मठ को दूर से ही प्रणाम करते हुए पुनः बस में सवार हो गये। सभी साथी आँखें मूँदे कल देखे गये दृश्यों को याद कर रहे थे। हमारी हालत बारात की वापसी वाले दिन घरातियों जैसी थी। अब हमें घर की याद आने लगी। मैं देवकी दीदी के साथ अपने बच्चों के बारे में बातें करने लगी। उन्होंने भी अपनी सारी बातें मुझे बताईं।

आगे कर्ण प्रयाग में पिदारगंगा और अलकनंदा का संगम है। उसके आगे रूद्र प्रयाग में मंदाकिनी और अलकनन्दा का संगम है। प्राकृतिक दृश्यों को देखते एक दूसरे से बाते करते श्रीनगर पहुँच गये। आज हमारा यही रात्रि विश्राम था। एक साफ सुथरे होटल में अन्सारी ने गाड़ी रोकी। हाथ मुँह धोने के बाद हमने खाने का ऑड्डर भेजा। यहाँ का और सब कुछ तो अच्छा था परन्तु चाँवल मोटा था। हमने जल्दी ही सोने का फैसला किया। यहाँ भी तीन बिस्तरों वाला कमरा था, हम तीनों ने सुख से रात्रि व्यतीत की।

(12)

दिनांक 12–10–2011 बुधवगार :–

नित्यक्रिया, स्नान, ध्यान, जलपान से निवृत्त हो हमनें प्रातः 7 बजे यहाँ से प्रस्थान किया। देवप्रयाग में अलकन्दा, भागीरथी नदी में

करते जब गुरूद्वारा पहुँचे तब गुरूद्वारे में अरदास समाप्त हो चुकी थी। हमने गुरू ग्रन्थसाहेब के समक्ष माथा टेका। आज हमें हरिद्वार घूमना था। यहाँ से विल्वकेश्वर महादेव के लिए रास्ता जाता है। हम सभी पैदल ही निकले। रास्ते में मिलने वाले मंदिरों की पूजा करते हुए। यहाँ बेल के वृक्षों की अधिकता है यूँ कहें कि बेल वृक्षों का जंगल ही है। लगभग दो किलोमीटर अन्दर विल्वकेश्वर महादेव का मंदिर है। प्राचीन मंदिर के पास ही नूतन भव्य मंदिर बन रहा है। पूजा के लिए लाये गये दोनों में अपराजिता के नीले नीले छोटे छोटे फूल थे। मैंने उन्हें नीलकण्ठ को चढ़ाया। आगे बढ़ने पर एक कुण्ड है जिसे गौरी कुण्ड कहते हैं, (गंगानदी के उस पार है) एक पुल के द्वारा दोनों स्थान जुड़े हुए हैं। वहाँ के शिलालेखों से ज्ञात हुआ कि माता गौरी ने यहाँ पर तपस्या की थी, शिवजी को वर के रूप में पाने के लिए। वह स्थान पेड़, पौधों, फूल पत्तों से बेहद सुन्दर ढ़ंग से सजाया गया है, सबसे बड़ी खूबी यह कि यहाँ जो गेरूवा वस्त्रधारी किशोरवय लंबा उत्तरीय ओढ़े संत बैठे थे, उन्होंने हमारे चढ़ावे पर ध्यान न देकर आँखे मूँदे लगातार मंत्र जाप जारी रखा। पूछने पर भी कुछ नहीं बोले। सबको प्रसाद दे दिया उसी प्रकार। मुझे तो वे शिव स्वरूप ही लगे।

गंगा जी इसी स्थान पर एक नारी के रूप में राजा शान्तनू से मिली थी। संभवतः राजा इस विल्ववन में शिकार हेतु आये होंगे। प्यासे होने पर गंगा जल पीने आये होंगे। परम रूपसी युवती की करूणा से विचलित हो ह्रदय हार गये होंगे और शामिल हो गये होंगे अष्टवसुओं के शापोद्धार कार्यक्रम में।

वहाँ से पैदल लौटते लौटते भोजन का समय हो गया। आज हमने सेवादार की सलाह मानकर गुरूद्वारे में प्रसाद लेना उचित समझा। सिर पर कपड़ा रखे बिना अन्दर प्रवेश वर्जित है। हमारे पास तो साड़ी का आँचल था, पुरूष साथी अपने सिर पर रूमाल डाले हाथ पैर धोकर उस बड़े से हाल में जाकर बैठे, जहाँ अमीर–गरीब सभी एक

तेज है। लोहे के पाईपों में लोहे की मोटी जंजीरें बाँधी गई हैं जिसे पकड़कर सीढ़ी पर ही नहाने की व्यवस्था है। घाट पक्का है सीढ़ियाँ चौड़ी हैं आराम से बैठकर नहा सकते हैं। दीदी को सम्हालकर नहलाया गया। हम सभी ने शक्ति भर गंगा स्नान किया (जल बहुत बर्फिला है) चाय–पीते गुरूद्वारे आये, आज हमने चण्डी देवी के दर्शन का कार्यक्रम रखा था। जो यहाँ से कुछ ही कि.मी. पर स्थित है। दो पहाड़ों पर आमने सामने चण्डी देवी, मनसा देवी विराजमान हैं, उन दो पहाड़ों के बीच की समतल भूमि पर हरिद्वार शहर बसा हुआ है। ऑटो मँगवा लिया था हमनें। यहाँ मंदिर तक जाने के लिये सीढ़ियों के अतिरिक्त रोपवे (ट्राली) की व्यवस्था थी, हमने टिकिट लिया और लाइन में लगकर रोपवे की प्रतीक्षा की। यहाँ यात्रियों की सुविधा का पूरा ध्यान रखा जाता है। बैठने के लिए कुर्सियाँ लगी हैं। चाय, कॉफी एवं पेयजल की व्यवस्था है। लाइन आने पर हम लोग ट्राली में बैठे। इस बार भी दीदी मैं और त्रिपाठी जी एक ट्राली में स्थान पाये। बाकी सभी लोग साथ थे। जहाँ ट्राली रुकती हैं वहाँ भी बड़ी चुस्त व्यवस्था है। कहीं धक्का–मुक्की, नहीं। लाइन लगाओ मंदिर तक जाओ, दर्शनकर दूसरी ओर निकलो। यहाँ माता का चण्डी रूप है जो दुष्टों के मन में भय का संचार करने वाला तथा भक्तों को अभय देने वाला है। बहुत दिनों की बिछुड़ी बेटी जैसे माँ से मिलती है उसी भाव से मैंने माता के दर्शन किये। पूजा करके प्रसाद चढ़ाया। वैसे कुछपल ही वहाँ रूका जा सकता है। आठों काल बारहों महिना इन मंदिरों में दर्शनार्थियों का ताँता लगा रहता है। जो देश के कोने कोने से आये हुए होते हैं। मंदिर के बाहर एक बड़ा बाजार है जिसमें नग, पत्थर आदि की दूकानें हैं। घर ले जाने के लिए प्रसाद आदि बिक रहा था। हम जिन सीढ़ियों से दर्शन करके उतर रहे थे वहाँ बहुत सारे बंदर थे जो यात्रियों के हाथ से प्रसाद छिनकर आराम से बैठकर बैठकर खा रहे थे। प्रसाद खाकर चुनरी फाड़कर फेंक देते थे। हम लोगों ने सावधानी से अपना

प्रसाद बचाया। एक ओर माता अंजनी की मूर्ति वाला मंदिर है, जिसमें उन्होंने बालक हनुमान् जी को गोद मे ले रखा है और भी मंदिर हैं, बजरंग बली, शंकर भगवान् लक्ष्मी माता आदि के। जिन्हें देखते बाजार से आवश्यक खरीददारी करते हम लोग भोजन के समय तक गुरूद्वारा आये। लंगर में प्रसाद लिया। थोड़ा आराम करके पुनः निकले मंदिरों के दर्शन करने। ऑटो वाला वहीं का निवासी था, उसे शहर के चप्पे चप्पे की जानकारी थी। वह हरिद्वार के प्रसिद्ध मंदिरों के दर्शन करता रहा। जिनमें इन्डिया टेम्पल, भारत माता का मंदिर, इसमें कई मंजिले हैं सफेद रंग की यह भव्य इमारत आधुनिक स्थापत्य कला का यशोगान करती प्रतीत होती है। इसमें ऐतिहासिक स्थानों, स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों, कवियों, साहित्यकारों के चित्र पूर्ण जानकारी सहित लगाये गये हैं सभी प्रान्तों की सांस्कृतिक विशेषता दर्शाने वाले चित्र सजे हुए हैं। मैं अपने साथियों में पीछे छूट जाती थी शिलालेख आदि पढ़ती। त्रिपाठी जी भी प्रतीक्षा करते। कहते, हमारे साथ एक लेखिका चल रही है भाई, हमारे देखने में इनके देखने में फर्क है''।

काँच का मंदिर – इसमें रंग बिरंगे काँच के टुकड़ों से सभी देवी देवताओं, धर्म गुरूओं की सुन्दर मूर्तियाँ बनायी गयी हैं। ऐसे काँच लगाये गये हैं कि एक चित्र कई रूप में दिखाई देकर अनेक होने का भ्रम पैदा करता है। बनाने वाले की तपस्या की प्रशंसा किये बिना हमसे रहा नहीं गया।

मंदिरों में प्रवेश हेतु दो–दो रूपये का टिकिट भी था, जो इनकी देखरेख के लिये उचित अंशदान ही है। एक बड़ा भव्य मंदिर अत्याधुनिक युग में बनाया गया है। इसकी सभी मूर्तियाँ बिजली द्वारा संचालित है, इसमें कृष्ण जी की लीलाओं वाली ज्यादातर मूर्तियाँ हैं। कई कृत्रिम गुफाएँ हैं। यह भी कई मंजिलो में बना है। वैष्णव देवी का मंदिर – यहाँ आकर ऐसा प्रतीत होता है जैसे सचमुच वैष्णव देवी पहुँच गये। वैसी ही गुफा, भैंरों का आक्रमण, माता का गुफा में जाना

और भैरव की सद्गति, पिंडी दर्शन, माता वैष्ण्व देवी का दर्शन चित्त को हरे ले रहा था।

बाबा अमरनाथ का मंदिर भी बना हुआ है, जिनका दर्शनकर मन अमरनाथ जाने को छटपटाने लगा।

सफेद संगमरमर का बना मानस मंदिर, जिसकी सभी दीवारों पर लाल रंग से सम्पूर्ण रामायण लिखी गई है। यह भी एक बहु मंजिला मंदिर है। पता चला कि जोधपुर के पत्थर से बने इस मंदिर को वहीं के कारीगरों ने बनाया है।

दक्ष मंदिर : यह वह स्थान है जहाँ दक्ष ने यज्ञ किया था, जिसमें शिव जी को बुलाया नहीं था। भ्रमवश अयोध्या पति राम को साधारण राजकुमार समझकर सीता का रूपधर कर उनकी परीक्षा लेने के अपराध में शिव जी ने सती को अपने वाम अंग से वंचित कर दायें अंग में स्थान दिया, जो पत्नी का न होकर माता–भगिनी या अन्य किसी पूज्य स्त्री का होता है। उन्होंने अखण्ड समाधि लगा ली। संकल्प कर लिया कि, शिव संकल्प किन्ह मन माही। यही तन सती भेंट अब नाही।

कहा कुछ नहीं किन्तु जगदम्बा ने उनके मन की बात जान ली वे चाहती थीं इस तन से मुक्त होकर अपने शिव को पुनः प्राप्त करने के लिये तप करना। अतः दक्ष यज्ञ में बिना बुलाये, ही चल पड़ीं, पति के मना करने के बावजूद भी। यहाँ यज्ञ में शिव का भाग न देख, उन्हें बेहद पीड़ा हुई और उन्होंने अपना शरीर योगाग्नि में भस्म कर डाला। शिव को सूचना मिली, उन्होंने अपनी जटा के बाल से वीरभ्रद को उत्पन्न करके भेजा, जिसने अन्य शिव गणों के साथ दक्ष का यज्ञ विध्वंस कर दिया। दक्ष का सिर काटकर यज्ञकुण्ड में डाल दिया। शिव जी भी पहुँचे। उन्होंने अपनी सती पत्नी, जो हमेशा उनके चरणों में लोटा करती थी, उनकी इच्छा जानकर बिना कहे ही वैसा आचरण करती थी, जरा सी गलती पर उसका त्याग किया। आज उसकी मृत देह उनकी बाहों में थी। कोमल हृदया सती उनका परित्याग बरदास्त

न कर सकी और उस स्वाभिमानि ने पति का अपमान सहन न कर अपना जीवन समाप्त कर लिया।

एक ऊँचे स्थान पर शंकर भगवान की बहुत बड़ी सी मूर्ति स्थापित है। उनकी गोद में मृत सती की देह झूल रही है। उस मूर्ति के चेहरे पर, अमर्ष, पीड़ा, क्रोध, पश्चाताप, प्रतिशोध की मिली–जुली भावना अंकित है। देखकर ये सारे भाव हृदय में उत्पन्न हो जाते हैं। यह मूर्ति सफेद संगमरमर की है, शरीर की एक एक शिराएँ आँखों का एक एक भाव हृदय की उथल–पुथल सब कुछ इस मूर्ति के चेहरे पर अंकित हैं जब चाहें ध्यान से पढ़ सकते हैं। मेरा मन शिव की पीड़ा से एकाकार होकर वही रम गया। साथी बहुत आगे निकल गये थे। दीदी भैया कुछ दूर पर थे, मुझे आगे बढ़ना पड़ा। यहाँ शिव जी का भव्य मंदिर है हमने वहाँ दर्शन किया।

शाम हो रही थी, हमें गंगा जी की संध्या आरती में शामिल होना था। अतः आटो में बैठकर सभी साथी गुरूद्वारे आ गये। जहाँ से तैयार होकर समय पूर्व गंगातट (हर की पौड़ी) पहुँचना था।

दिनांक 15–1–2011, शनिवार :–

यह हमारा अंतिम दिन था हरिद्वार में। आज करवा चौथ थी। देवकी दीदी ने करवा चौथ व्रत रखा था। घर की तरह पूजा पाठ का प्रबंध नहीं हो सकता था फिर भी वे उपवास थीं।

प्रातः गंगा स्नान के लिए गये। आज हमनें गंगाजल घर लाने के लिए डिब्बे खरीदे। सीढ़ी पर काई जमी देखकर मैंने दीदी को थोड़ा आगे बुला लिया, त्रिपाठी जी कपड़े बदलकर नहाने जा रहे थे कि सीढ़ी पर पैर फिसल जाने के कारण गिर पड़े। फिसलते हुए दो सीढ़ी नीचे गये, किन्तु नट की भाँति उछलकर खुद को सम्हाल लिया। हम दोनों के मुँह से एक साथ चीख निकली। देवकी दीदी रोने लगीं "हाय माँ । आज क्या मुँह दिखलाती अपने घर में बच्चों को। मेरी चौथ माता ने मेरे व्रत का मान रख लिया। हम लोग उन्हें घेरकर खड़े हो गये थे।

गंगा मैया की कृपा से उन्हें चोट नहीं आई थी कुछ ज्यादा। मैंने दीदी को समझाकर चुप कराया, वे तट की सफाई करने वालों को भला बुरा कहने लगीं।

आठ बजे तक हम लोग मनसा देवी के लिए निकल गये थे वहाँ भी रोपवे का प्रबंध था। हरकी पौड़ी के पास ही टिकिट मिलती है। ट्राली से ऊपर जाकर हमने माता मनसा देवी के दर्शन किये, और मनोकामना में मैंने जरा और साहस करके स्वयं को युग तुलसी बनाने का वरदान माँगा। यहाँ यज्ञ की अग्नि प्रज्जवलित थी। नारियल गोले की आहुति दी जा सकती थी। हमारे आगे खड़ी एक महिला ने नारियल डालना चाहा। दक्षिणा कुछ कम थी, पंडे ने ऐसा डाँटा कि महिला रोआँसी हो गई। उसका हश्र देखकर हमें नारियल डालने की हिम्मत नहीं हुई। एक पल तक ही माँ मनसा देवी की जगत मोहिनी छवि को निहार पाये कि प्रबंध में लगी महिला पुलिस जो कद काठी में कहीं से स्त्री नहीं लगती थी आवाज भी जिसकी मर्दाना थी, उसने हमें चिल्लाकर आगे बढ़ा दिया। अन्य मंदिरों के दर्शन करते हम लोग 11 बजे तक नीचे आ गये थे। **(रंगीन चित्र 16 – गंगा आरती)**

हमें ऋषिकेश भी जाना था, अतः आटो में बैठकर ऋषिकेश चल पड़े, रास्तें में, पारद शिवलिंग के दर्शन करते, वहाँ रत्न केन्द्र में नवरत्नों की माला खरीद, हम लोग ऋषिकेश पहुँचे। यहाँ लक्ष्मण झूला, एवं राम झूला देखा। गंगा जी के तट पर बने बारह मंजिले मंदिर की सीढ़ियाँ चढ़कर मूर्तियों के दर्शन किये। एक दो मंजिलों पर तो दुकानें ही थी, मूर्तियों पर धूल पड़ी थी, मंदिर का व्यापारिक प्रयोग किया जाना स्पष्ट परिलक्षित हो रहा था। बारहवीं मंजिल से रामझूला और नीचे बहती पुण्य सलिला गंगा की धारा का दर्शन करना अपने आप में एक अनोखा आनंददायी अनुभव था। दीदी को नीचे बैठा दिया था हमने एक दूकान पर। और भी कई लोग नहीं चढ़ पाये थे, केदारनाथ की चढ़ाई की तकलीफ अभी नहीं ठीक हुई थी जो लोग पैदल चढ़े

थे उनकी। वहाँ से लौटते हुए शाम हो गई, हमें गंगा आरती में आज भी शामिल होना था, अतः वहाँ से गुरूद्वारा आने के बाद ज्यादा देर रूके बिना हम लोग रिक्शे से हरकी पौड़ी की ओर चले, आज घर ले जाने के लिये सारे उपहार भी खरीदने थे, यहाँ से सब लोग अलग–अलग चले हरकी पौड़ी के लिए। हम तीनों एक साथ थे।

गंगा आरती से लौटकर हमने अपने अपने परिजनों के लिये उपहार खरीदे, बच्चों के लिये खिलौने, बहुओं के लिए चूड़ियाँ, टोला पड़ोस के लिए चाबी गुच्छा, पेन, सिन्दूर, टिकली, रक्षा माला, प्रसाद आदि। दीदी का व्रत था हमें पंडित होटल से खाना खाकर उनके लिए खाना लेकर आना था। दोपहर को भी भोजन नहीं हुआ था हमारा।

दीदी को गुरूद्वारे छोड़कर जब होटल पहुँचे तो वहाँ बड़ी भीड़ थी। इधर दस बजे के बाद गुरूद्वारे का फाटक बन्द हो जाने वाला था। बार–बार त्रिपाठी जी ने होटल वाले से दो थाली लगाने और 1 थाली पेक करने को कहा, वे लोग 'बस बाबू जी एक मिनट कहते रहे। हमें आधा घंटा गुजर गया इस प्रकार। मन विषाद से भर उठा, हमारे घरों में दो चार व्यक्ति खाते–पीते रहते हैं, आकर। और आज यहाँ पैसा लेकर खड़े हैं, भोजन नहीं मिल रहा है, यही सोच रहे थे।

जब सहन नहीं हुआ तो विचार हुआ कि दो थाली पेक करवा लेते हैं, एक में हम दोनों बहने खालेंगी और एक त्रिपाठी जी के लिये हो जायेगा।

होटल वाले यह भी नहीं कर पाये। एक रोटी उतरती कि किसी न किसी की थाली में पहुँच जाती। रोटियों के साथ–साथ समय हमारे हाथ से निकलता जा रहा था। हम कभी कुर्सी से उठकर चूल्हे के पास आते, कभी बैठ जाते। हमने देखा कि बगल में एक साथ चार रोटियाँ उतर रही हैं, पंडित होटल में मना कर दिया ''रहने दो भैया, हमारे पास समय नहीं''। हमने बगल वाले होटल में आठ रोटियाँ बाँध देने को कहा ''चलो अब नहीं खायेंगे। यहाँ रहे तो गेट बन्द हो

जायेगा।" त्रिपाठी जी ने कहा। मैंने मौन समर्थन दिया। वहाँ भी भीड़ थी रोटी मिलते मिलते आधा घंटा लग गया। हमारे पास अब कुछ मिनट ही थे, अतः हमने सब्जी का मोह त्यागा और रोटी लेकर पैसे दे लम्बे लम्बे डग भरते गुरूद्वारे की तरफ लपके।

चौथ का चाँद कब का निकल चुका था, बेचारी दीदी पानी के लिए तरस रही थीं उपवास में। मुझे अपनी विवशता पर बड़ा दुःख हुआ। जब हम गुरूद्वारे पहुँचे, सेवादार बस गेट में ताला डालने ही वाला था। हमारे कुछ साथी नीचे लंगर में प्रसाद ले चुके थे। जो पहले पहुँचे वे पंडित होटल से खाकर आ गये थे।

"चलो दीदी कुछ खा पी लें'।।

आप बीती क्या सुनाती ? मैंने दीदी को हाथ मुँह धोने के लिए कहा। मेरे पास लड्डू बचे थे एक दो, अब तक, कुछ सलोनियाँ थीं दीदी के पास, फल, अचार, यहीं सब जमाकर मैंने उन्हें पारण करने को दिया। पता नहीं उन्हें क्या समझ में आया, उन्होंने हम पर कोई क्रोध न करके परम संतुष्टि से पारण किया। देखा तो उसने आठ की जगह 7 रोटियाँ ही दी थी, उसमें भी एक इतनी जली थी कि खाना मुश्किल था, शेष बची 4 रोटियों में दो त्रिपाठी जी और दो मैंने खाकर पानी पी लिया। मन में कुछ असंतोष था जिसे हमनें स्वयं को समझाकर शान्त किया। "यात्रा में इतनी असुविधा कोई बहुत बड़ी बात नहीं है।" आज तक अधिकांश व्यय त्रिपाठी जी ही करते आये थे, मैंने कई बार देना चाहा, परन्तु वे टाल गये। मैंने अपना खर्च जोड़ रखा था उनके मना करने पर भी मैंने लगभग सारा व्यय चुका दिया।

प्रातः 6 बजे ही हमारी गाड़ी थी। कल की घटना ने समझा दिया था कि चाहे सारी दुनियाँ घूम लो अपने घर जैसा सुख कहीं नहीं मिल सकता सांसारिक व्यक्ति को। उनकी बात और हैं जिन्होंने प्रभु भक्ति के लिये संसार के सुखों से किनारा कर लिया है। हमने अपने अपने सामान अटैची, थैले आदि जमाकर रखें। प्रातः बिस्तर आदि को

समेटकर रखेंगे, और चल पड़ेंगे यही सोचा था। अब घर परिवार, बाल बच्चों से मिलने के लिए मन छटपटा रहा था।

दिनांक 16–10–2011, रविवार – को हमने जल्दी ही प्रातः क्रिया से निवृत्त हो सामन समेटा, कमरे से सामान निकालकर ताला डाला। हमारे साथियों को त्रिपाठी जी पहले ही उठा चुके थे और कुछ दान दक्षिणा हम सबकी ओर से दे रहे थे तब तक सभी लोग नीचे आ गये सामान लेकर। मैंने पूछा "सामानवामान क़खरो छूटे तो नई हे" ?

"अपन डहर ले तो धर डारे हन"। पटेल जी ने उत्तर दिया।

"अऊ तुंहर कनपट्‌टा कती हे ? जाड़ हावय, बाँध लेवा"?

"पहिली दिन जब तबियत खराब होइस त रजवा ह अपन कन पट्‌टा ला दे रहिस, तेला यमुनोत्री म छोड़ भुलाएंव, अबड़ अकन गोठ सुनाइस, आखिर म ओ दिन जाये के बेरा सौ रूपया लेहिच गै" ? पटेल जी ने बताया।

"नई चेत करेंव जी" मैंने लोक भाषा में उत्तर दिया।

"चलो.....चलो, गाड़ी छूट जायेगी" त्रिपाठी जी ने सबको बाहर निकलने के लिए पुकारा

कल से बुलाये रिक्शे वाले पहले से आकर रुके थे, शर्मा जी का एक रिक्शे वाले से किराये के लिए विवाद हो रहा था। उस रिक्शे को हमने छोड़ दिया।

अभी भोर का उजाला फैलने जा रहा था, चौथ का चाँद पहाड़ों की ओट में अपना दामन छिपाना चाहता था तब तक हम लोग हरिद्वार से जगन्नाथ पुरीं जानेवलाी उत्कल एक्सप्रेस में बैठ चुके थे, हमने एक बार बजरंग बली की जय–जयकार की। गाड़ी ने हरिद्वार की धरती छोड़ दी। अब वह हमारे शहर बिलासपुर की ओर दौड़ रही थी। हास्य, विनोद के बीच हमारी यात्रा कटती रही। सबने अपना सामान अपने पास रखा था, मैं आर.एस.सी. वाली सीट पर थी जो दरवाजे के निकट ही थी, सीट के नीचे मेरा सामान रखा था। इतने

लोग थे। गाड़ी में अधिक भीड़ नहीं थी। इसके अतिरिक्त नगद मैंने सुरक्षित रख छोड़ा था। अतः रात को निश्चिंत होकर सो गई। प्रातः तीन बजे उठकर अपना बैग देखने लगी तो सबसे बड़ा बैग गायब था। इधर–उधर तलाश करने के बाद जब पक्का हो गया कि बैग उतर गया तब मैंने साथियों को बताया। सब परेशान हो गये। रंग में भंग पड़ते देखकर मैंने कह दिया – जाने दीजिए जो गया सो गया, लगता है दान दक्षिणा में कोई कमी रह गई थी फिर जो जिसके अंश का होता है उसे अवश्य मिलता है आप लोग मन खराब मत कीजिए। लेकिन मेरे कहने से भी कुछ न हुआ मन खराब हो गया सबका।

जैसे–जैसे हम अपने शहर के करीब आते गये उस बात को भूलते गये। इसी बात का पछतावा था कि गंगोत्री से लाया गया जल जो रामेश्वर में चढ़ाने के लिए मैं ला रही थी, वह भी उसी बैग में था चला गया, रामझूले के मंदिर में देखी पुस्तक कर्म विपाक जिसमें आगे पीछे के सात जन्मों का हाल होता है, मैंने बहुत खोजने के बाद मनसा देवी पर खरीदा था, जिसका एक वाक्य ही मैं पढ़ पाई थी, 'जो चोर के किसी काम की न थी, उसके जाने का मुझे बहुत दुःख हुआ। बच्चों के लिए खरीदे उपहार भी गये। जब वे पूछेंगे कि दादी हमारे लिए क्या लाई तो क्या उत्तर दूँगी। मैंने स्वयं को इस झटके से उबारा, खुशियाँ इतनी सस्ती नहीं होती बच्चों की, बिलासपुर पहुँचकर मैंने सबके लिए उपहार खरीदने के बाद ही घर जाने का फैसला किया। बहुत दिनों तक किसी को पता न चलने दिया कि मेरा बैग उतर गया था। अब तो सुख के पलों की याद ही है अक्षयकोष की तरह मनो मस्तिष्क में सुरक्षित।

****

गंगासागर तक बहती गंगा, प्रायः भरतखंड की जीवन रेखा बनी। अनगिनत प्राणी आज तक उनके पावन नीर में मुक्ति पा चुके हैं। देश के सारे बड़े शहर गंगा तट की शोभा बढ़ा रहे हैं यथा हरिद्वार, वाराणसी, इलाहाबाद, कलकत्ता, कानपुर, बलिया, हस्तिनापुर आदि आदि। व्यापारिक, संसाधन के रूप में गंगा नदी की कोई तुलना नहीं है। जब पेट्रोल की जानकारी नहीं थी उस समय जल मार्ग द्वारा ही सारे व्यापार किये जाते थे। इनके ऊपर अनेको बाँध बनाये गये, जिससे कृषि की सिंचाई हेतु जल प्राप्त होता है, जल विद्युत के कई संस्थान स्थापित किये गये हैं, जिनका हमारे आधुनिक जीवन में अत्यधिक महत्व है।

गंगा जी का जल हिमालय की अगम उपत्यकाओं से होकर आता है,जीवन दायिनी जड़ी बूटियाँ, खनिज आदि अपने में आत्मसात करता। इस जल की विशेषता है कि चाहे कितने ही दिन रखा रहे, कीड़े नहीं पड़ते। हमारे धार्मिक अनुष्ठान, यज्ञ, पूजा, पाठ संस्कार आदि इसके बिना पूर्ण नहीं होते। यहाँ तक कि प्रत्येक प्राणी के मुख में मृत्यु पूर्व गंगा जल डालना आवश्यक है। कहते हैं इससे मरनेवाले को मुक्ति मिलती है, बादशाह अकबर की रसोई में गंगा जल का ही प्रयोग होता था। उनके महल में गंगा जल ही पिया जाता था।

उसी गंगा माता की आज की दुर्दशा पर आँसू बहाने का मन होता है। जनसंख्या इतनी बढ़ी कि उसके भरण पोषण एवं निस्तारण में दैवीय संसाधनों का भट्ठा बैठ गया। वैज्ञानिक ऐसी भी आशंका जता रहे हैं कि यदि हम अभी भी उनके प्रति सचेत न हुएतो वे सरस्वती आदि नदियों की भाँति लुप्त हो जायेंगी। मन आर्त्तनाद कर उठता है कल्पना से।

एक समय इस भारतवर्ष में ऐसा भी आया था जब आर्यों के द्वारा किये जाने वाले यज्ञों में असंख्य निर्दोष पशु बलि के नामपर काट दिये जाते थे। वर्ण व्यवस्था, जाति प्रथा के संकीर्ण दायरे में संकुतिच

हो अधिकांश प्रजा के जीवन की सहजता का मार्ग अवरूद्ध कर रही थी, चूँकि मुद्रण कला का विकास नहीं हुआ था, वेद, पुराण, उपनिषद् आदि कुछ लोगों की सम्पत्ति बन कर रह गये थे, क्योंकि इन्हें याद करने में जीवन का एक बड़ा भाग चला जाता था। चूँकि उन नियमों की सभी को बराबर आवश्यकता थी, इसलिए ब्राम्हणों का महत्व बढ़ गया। जैसे अपने फन के विशेषज्ञों का महत्व होता है उसी प्रकार। अब ये ब्राम्हण शिष्यों की कड़ी परीक्षा लेने लगे। जिसके कारण इनकी संख्या कम ही रही। यज्ञों का बढ़ता महत्व भी आम जन के लिये भारी पड़ने लगा। इसकी प्रतिक्रिया स्वरूप बौद्धधर्म का उदय हुआ। इसमें अहिंसा सबसे बड़ा धर्म माना गया, धर्म के शाश्वत तत्व ही इस धर्म के भी आधार है, किन्तु तत्कालिन विसंगतियों से मुक्त होकर ये उभरे। सत्य, अहिंसा, ब्रम्हचर्य, अस्तेय, अपरिग्रह, जाति–पाँति रहित समाज, स्त्री पुरूष समानता, ऊँच–नीच की भावना का विरोध निर्गुण, निराकार ब्रम्ह के विचार को लेकर यह धर्म आगे बढ़ा किन्तु एक समय ऐसा भी आया कि इस धर्म में भी अतिवाद ने अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया। युवक युवतियाँ को समान रूप से बौद्ध धर्म की दीक्षा दी गई। हजारों लोग एक साथ बौद्ध भिक्षु बन जाते थे। महान् सम्राटों ने भी इस धर्म को अपनाया जिनमें सम्राट अशोक का नाम सर्वोपरि है। बौद्धधर्म के प्रचार प्रसार के लिये इन्होंने शिला लेख, स्तंभ, स्तूप आदि का निर्माण कराया, अपनी पुत्री संघमित्रा एवं पुत्र महेन्द्र को समुद्री मार्ग से लंका भेजा। विदेशों में भी यह धर्म बहुत लोकप्रिय हुआ। गृहस्थी की उम्र मे युवक युवतियों के भिक्षु बनने का परिणाम यह हुआ कि श्रम शक्ति का ह्रास होने लगा, कामचोर, आलसी लोग गेरूए वस्त्र पहन हाथ में भिक्षा

महायान। एक शाखा तो मूर्तिपूजक बन गई। गौतम बुद्ध की मूर्तियों की पूजा की जाने लगी। इन्होंने ऐसी घृणित साधना को तप का नाम दिया जिसमें, माँस, मदिरा, मैथुन, उपासना के अंग माने गये और तो और हिन्दू धर्म, जो वैदिक सनातन धर्म है उसे जड़ से मिटाने का बीड़ा भी इन्होंने उठा लिया, मंदिरों की मूर्तियाँ नष्ट करना उनका कर्तव्य बन गया। ऐसे समय में वैदिक धर्म के उद्धार हेतु दक्षिण भारत में एक महान् विभुति ने जन्म लिया, माता–पिता, शिव भक्त थे इसलिए इन्हें भी शिव मान इनका नाम शंकर रखा। इस विलक्षण बालक को अत्यंत छोटी उम्र में ही चारों वेद मुखाग्र हो गये थे। इस बालक ने देश भर में घूम–घूमकर शास्त्रार्थ में बौद्धों को हराया। अपने अकाट्य तर्कों एवं समसामयिक उदाहरणों द्वारा उनकी नभ में फहरती ध्वजा को भूलूंठित कर वैदिक धर्म को पुनः उन्नति के शिखर पर स्थापित किया। श्री बद्रीश की मूर्ति को भी उन्होंने नारद कुंड से निकालकर गरूड़, कोटि गुफा में स्थापित किया था। भविष्य में इस प्रकार देश में वितंडावाद न फैले, इस उद्देश्य से देश के चार स्थानों पर चार मठों की स्थापना की। उत्तर में बद्रीनाथ, दक्षिण में रामेश्वरम्, पूर्व में जगन्नाथ पुरी और पश्चिम में द्वारिकापुरी। यहाँ के महंत, अब भी शंकराचार्य कहे जाते हैं इनकी महिमा अनंत है। हिन्दूधर्म के प्रत्येक व्यक्ति के लिए इन चारों धामों की यात्रा अनिवार्य माना गया है। ब्रम्हचर्य, गृहस्थ के बाद वानप्रस्थी और सन्यासियों के लिए ये यात्राएँ वरदान स्वरूप हैं। देश के सभी भागों को देखने, वहाँ के लोगों को जानने पहचानने और अपने अनुभव एक भाग से दूसरे भाग में बाँटने से ये राष्ट्रीय एकता में महत्वपूर्ण दायित्व निभाते रहे हैं। साम्प्रदायिक सामंजस्य की दृष्टि से भी यह व्यवस्था अत्यंत महत्वपूर्ण है। साथ ही धार्मिक वातावरण के निर्माण में भी इनका योगदान अद्वितीय है। देश में पर्यटन उद्योग को बढ़ाने में भी इनकी जबरदस्त भूमिका है। जि
उन भागों में भी सुख समृद्धि है जहाँ का जीवन अत्यन्त कठि

अन्न कम उत्पन्न होता है, ऐसे स्थान पर पर्यटकों के भारी संख्या में आने से वर्ष भर के लिए स्थानीय लोगों की रोजी रोटी का प्रबंध हो जाता है।

इनके रहते भी देश में जो वर्तमान अव्यवस्था पैर पसार रही है उसका एकमात्र कारण हम इन तीर्थों को पाप प्रायश्चित का स्थान न मानकर वन, पर्वत, भ्रमण या भगवान् को अपनी काली कमाई का कुछ हिस्सा भेंट में देकर पाप धोना या पाप करने के लिए अधिकृत होना मान ले रहे हैं, मैं ऐसे कई लोगों को जानती हूँ जो सरकारी लाभ के पदों पर कार्यरत् हैं, करोड़ों की रिश्वत लेते हैं, और हरवर्ष इन महान् तीर्थों में जाकर हजारो दान दक्षिणा देते हैं। वे कभी भगवान् से पूछते क्यों नहीं कि उनका पाप क्षमा किया या नहीं। भगवान् क्या पाप करने का लाइसेन्स देने वाले हैं? ये कभी प्रभु दया के पात्र नहीं बन सकते मेरे विचार से।

हमें चाहिए कि हम शंकराचार्य की सन्तान होने का फर्ज निभायें और उन उद्देश्यों का विस्तार करे, जिनकी प्राप्ति हेतु उन्होंने अपना सर्वस्व लुटा दिया। ताकि देश की विघटनकारी शक्तियाँ भी संगठित हो देश की तरक्की और मानवता के हित में अपनी शक्ति लगायें।

*****

(1) सुख के पल –

लेखिका : श्रीमती तुलसी देवी तिवारी

(2) भाग गया मधुकर – कहानी संग्रह

लेखिका : श्रीमती तुलसी देवी तिवारी

(3) भावांजलि – काव्य संग्रह

लेखक : आर. ई. सिंह (बेरूआर)

(4) मेला–ठेला–सामान्य ज्ञान वर्धन कहानी संग्रह

लेखिका : श्रीमती तुलसी देवी तिवारी

(5) क्या खोया क्या पाया – कहानी–इन्द्रजीत

किशोर साहित्य